शुभाशीष

।। ॐ ।।

सिद्धान्त की उत्तीर्णता तभी संभव है, जब व्यक्ति नीति में निपुण है। विशिष्ट पुण्यात्मा जीव भी अपने कार्य में सफलता प्राप्त तभी कर पाता है, जब वह न्याय-नीति सम्पन्न होता है। विश्व में सम्पूर्ण विशिष्ट लोग न्याय-नीति के बल से ही विश्व विकास कर पाये। वस्तु के वस्तुत्व सत्यार्थ-बोध न्याय-नीति से ही संभव है।

भारतीय एवं अभारतीय सम्पूर्ण विद्याओं में व्यवहार कुशलता के लिये नीति-शास्त्रों का अभ्यास करना अनिवार्य है। विचार-कुशलता, नीति-निपुणता, वाक्पटुता, श्रेष्ठ-वक्ताभाव, साहित्य सिद्धान्त न्यायनीति शास्त्रों के ज्ञान से ही आती है। लोक में व्यवहार कुशल ही सर्वज्ञ है। लौकिक सर्वलोक वंचना से बचे एवं स्व-पर हितार्थ **श्रुतसंवेगी, जिनशासन-उद्योतक, मनोज्ञमुनि श्रमण श्री आदित्यसागर जी ने सर्वजन-हितार्थ 'सत्यार्थनीति' ग्रन्थ का सृजनकर श्रुतसम्पत्ति की वृद्धि की। उनके पुण्यभूत कार्य के लिये शुभाशीष।**

वे इसीप्रकार से सर्वज्ञशासन, नमोऽस्तुशासन, श्री जिनशासन का उद्योतन करें, स्वात्मकल्याण के साथ।।

।। ॐ नमः सिद्धेभ्यः ।।

पावन वर्षायोग, 2025 **श्रमणाचार्य विशुद्धसागर**
14 जुलाई, विरागोदय तीर्थ, भारत

प्राक्कथन

सम्पूर्ण जीवन में आने वाली ईति और भीति को समूल से नष्ट करने की क्षमता जिसमें हो, वही सत्यार्थ में नीति है, जो स्वयं को सुख देने के साथ-साथ, पर के दु:खों को दूर करके सुख-प्रदान करने में कारण बनती है, जीवन को अनर्थ से बचाकर अनर्घ्य बनाती है।

जो ''**सत्यार्थनीति**'' का जीवन जीते हैं और **सत्यार्थ-नीति** के साथ जीवन जीने की प्रेरणा देते हैं, वे ही सत्यार्थ में श्रेष्ठ नीतिज्ञ हुआ करते हैं। क्योंकि बिना नीति के जीवन जीने वाला न श्रेष्ठ पुरुषार्थ कर सकता है और न ही प्रतिबुद्ध जनों के बीच में अपना स्थान बना सकता है, इसलिये **स्व-पर के कल्याणार्थ सत्यार्थ-नीति का जीवन जीना ही श्रेयस्कर है।**

इसी मंगल दिव्यातिदिव्य भावना से ओतप्रोत होकर 21 वीं सदी के महान् नीतिज्ञ, प्रतिभा सम्पन्न, प्रज्ञावंत-पुरुष, द्विशताधिक ग्रन्थों के कर्ता एवं उपदिष्टा पट्टाचार्य भगवन् गुरुवर विशुद्धसागर जी यतिराज के अभिन्न शिष्य, मेरे अग्रज, सोलह भाषाओं के ज्ञाता, प्राकृतमार्तण्ड, प्राकृतविद्यागुरु, प्राकृतविद्या-व्यसनी, युवाओं के प्रेरणा स्रोत, श्रुतसंवेगी, महाश्रमण आदित्यसागर जी मुनिराज ने इस अनमोल कृति ''सत्यार्थ-नीति'' का सुसृजन किया है।

आपके अन्तर्मन की भावनाओं में निरन्तर श्रुत का आलोडन चलता ही रहता है। आपने अपनी कठिन साधना से अमूल्य समय निकालकर श्रुत के कोष वृद्धि करने में अपनी अहम भूमिका बिना अहं के, बिना वहं के निभाई है। इसी अंतरंग की निर्मल पवित्र भावना से आपने सम्पूर्ण निर्ग्रन्थ भगवन्तों के और विद्वानों के हृदय-पटलों पर अपना नाम अंकित कराया है। आप अपने जीवन को अनुशासन और प्रबंधन के साथ जीना ही बेहतर समझते हैं और जन-जन के कल्याणार्थ इस जीवन को जीने की नीति को सु-रीति के साथ जन सामान्य को विशेष बनाने के लिये सहजभाव से सहजभाषा में समझाने का सतत प्रयास करते रहते हैं।

यही प्रयास **इस कृति में पूज्य श्री ने किया है। जिसमें छोटी-छोटी नीतिसूत्रों के माध्यम से बड़ी-बड़ी सीखें जन सामान्य को प्रदान की है। जैसे- दूसरों के मन को जीतने के लिये पूज्य श्री ने एक नीतिसूत्र दिया कि- सेवा, प्रशंसा और आहार से दूसरे के मन को**

जीता जाता है। ऐसे अनेक प्रकार के नीतिसूत्र, श्रेष्ठ वक्ता का लक्षण, लोगों के दिल में जाने का मार्ग, सम्पूर्ण लोक किसका मित्र है, दुर्जनों से दूरी क्यों जरूरी है?, सभी कार्यों की सिद्धि का मंत्र, इच्छापूर्ति न होने पर भी कैसे वचनों का प्रयोग करें?, ऐसी कई नीतिसूत्र इस कृति के अध्ययन से ही आप जान सकेगें। यहाँ एक विषय जरूरी बताना समझता हूँ- संस्कृतसूत्र का अभ्यास पूज्य श्री ने बहुत दिनों पहले से प्रारम्भ कर दिया था, जब संघ के द्वारा प्रेरणा मिली तो यह 4 नीतिसूत्रों का ग्रन्थ कोटा के पावन वर्षायोग में श्री 1008 चन्द्रप्रभ स्वामी की चरणनिश्रा में शीघ्र ही पूर्ण कर दिया।

पूज्य श्री की यूँ तो अनेकों विशेषताएँ हैं, उनमें से एक विशेषता यह है कि - जो कार्य अपने हाथ में लेते हैं, उसे पूर्ण निष्ठा के साथ, समय की अवधि को निर्धारित करके उसी अवधि में पूर्ण भी करते हैं। अभी तक पूज्यवर ने लगभग 50,000 श्लोक प्रमाण संस्कृत-प्राकृत साहित्य रचना कर चुके हैं। पहले लगभग 1,00,000 श्लोक प्रमाण रचना करने का भाव बनाया था, लेकिन समाधि शिरोमणि गणाचार्य भगवन् दादागुरु विरागसागर जी यतिराज की समाधि के पश्चात् पूज्यश्री लगभग 1,25,000 श्लोक प्रमाण रचना करने का भाव गुरु के समक्ष रखा। गुरु के आशीष से और आपके अथक परिश्रम से यह भाव भी शीघ्रातिशीघ्र पूर्ण होगा।

मेरा अहो! अहो! अहो! सौभाग्य रहा कि- मुझ अल्पश्रुतज्ञ को सम्पादन करने का अवसर प्रदान किया गया। साथ ही इस कृति के सम्पादन में **डॉ. सतेन्द्र कुमार जैन** की भी अहम भूमिका रही। **मुझे इस कृति से नीति, रीति और प्रीति के साथ जीवन जीने की प्रेरणा मिली।**

अगर इस कृति के सम्पादन में कोई त्रुटि अवशेष हो तो बुधजन मुझे इस त्रुटि से अवगत कराने की कृपा करें, क्योंकि आगम में कहा है- **''को न विमुह्याति शास्त्रसमुद्रे''** अगर मुझ छद्मस्थ से सम्पादन करते समय कोई त्रुटि अवशेष रह गयी है, तो सरस्वती माँ मुझे क्षमा करें।

॥ विशुद्धात्मने नमः ॥

गुरु पूर्णिमा, जयपुर
विशुद्धज्ञानवर्षायोग
10 जुलाई 2025

विशुद्धगुणाकांक्षी
श्रुतप्रिय श्रमणरत्न अप्रमितसागर

प्रस्तावना

श्रमण संस्कृति संस्कृत, प्राकृत एवं अपभ्रंश आदि भाषाओं में रचित वाङ्मय से भरी पड़ी है। सर्वाधिक पुरातत्त्व एवं साहित्य की स्वामिनी बनने का सौभाग्य भी सनातन श्रमण संस्कृति को ही प्राप्त है। श्रमण संस्कृति अपनी साधना, तपश्चरण, नाना विधाओं से युक्त सत्शास्त्र एवं धर्मपरायणता के लिये सकल विश्व में सुप्रसिद्ध है।

जैनधर्म-जैनदर्शन ही विश्व-सनातन धर्म—

स्वर्ण को अपने अस्तित्व के रक्षणार्थ किंचित् भी चिंता नहीं रहती। चाहे उसे किसी भी कसौटी में घिसा जाये या फिर अग्नि में डाला जाये अथवा यन्त्रों से काटा जाये, स्वर्ण को भय नहीं लगता; क्योंकि वह जानता कि वह स्वर्ण है। हर परिस्थिति में स्वर्ण तो स्वर्ण ही है, ठीक इसी प्रकार जैनदर्शन सनातन श्रमण संस्कृति को चाहे जिस तर्क की कसौटी पर घिसा जाये, चाहे जिस युक्ति के अस्त्र-शस्त्र से काटा जाये या फिर सत्य की भट्टी में परीक्षित भी क्यों न किया जाये तो भी वह सनातन-संस्कृति ही सिद्ध होगी। ध्यान रखें-''**भीड़ सत्य का प्रमाणपत्र नहीं है, भीड़ तो जादूगर के पास भी देखी जाती है। भीड़ सत्य नहीं होती, सत्य के पीछे भीड़ अवश्य हो सकती है।**''

जैनधर्म जैनदर्शन ही विश्व सनातन धर्म और दर्शन है, इसे सिद्ध करने वालों के पास तर्क, युक्ति, प्रमाण आदि सभी सत्यार्थ अस्त्र-शस्त्र हैं। विशेष बात यह है कि जो ऐसा नहीं मानते, उन्हें स्व कुतर्कों को एवं स्व हठ को छोड़कर अपने ही कल्पित-ग्रन्थों को देख लेना चाहिये। जैनदर्शन की सनातनता के प्रमाण स्वयं को सनातन कहने वालों की पोथियों में स्वयं उल्लिखित हैं, फिर वो चाहे वेद हों या फिर पुराण। **जैनदर्शन में प्राप्त विपुल सत्यार्थ-साहित्य तथा उसके सिद्धान्त इस बात को प्रामाणिकता देते हैं कि सनातन संस्कृति जैनसंस्कृति ही है।**

भारतीय-साहित्य में जैन साहित्य का महत्त्व एवं स्थान—

सत्यार्थ-नीतिः

भारतीय साहित्य वाङ्मय में जैन साहित्य का स्थान उच्चतम है। यदि भारतीय साहित्य में से जैन साहित्य को हटा दिया जाये तो लगभग खाली ही हो जायेगा। वर्तमान में प्राप्त साहित्य में से 7० प्रतिशत साहित्य जैनदर्शन के पास है। **प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, कन्नड़, तमिल, तेलगू, हिन्दी, राजस्थानी, डुंडारी आदि अनेकों भाषाओं में प्राप्त साहित्य प्रायः जैनदर्शन के ही पास है।** लिपियों की जननी कही जाने वाली ब्राह्मी लिपि के दातार स्वयं प्रथम तीर्थेश वृषभ देव ही थे। ब्राह्मी लिपि से ही सर्वप्रथम ग्रन्थलिपि का निर्माण हुआ जो आगे जाकर तमिल-लिपि बन गई। कन्नड़, हिन्दी आदि लिपियाँ भी ब्राह्मी लिपि से ही उद्भूत हुई हैं।

सनातन सत्यार्थ श्रमण संस्कृति में प्राप्त विपुल साहित्य विपुल विषय वस्तुओं से परिपूर्ण है। लगभग सभी विधाओं में जैनसाहित्य संप्राप्त है। **प्राच्य सनातन श्रमण संस्कृति वाङ्मय में वर्णित सिद्धान्त, कथा-साहित्य, काव्य-विद्या, जीवाजीव-विज्ञान-विद्या, नीति-विद्या, भूगोल-विद्या, कृषि विज्ञान-विद्या, गृहनिर्माण-विद्या, गान-विद्या, नृत्य-विद्या, औषध-विद्या (आयुर्वेद), अध्यात्म-विद्या (आत्मज्ञान), शब्द-विद्या (व्याकरण), लिपिविज्ञान-विद्या, नयप्रमाण-विद्या, तर्क-विद्या, यन्त्र-विद्या, मन्त्र-विद्या, तन्त्र-विद्या, ज्योतिष-विद्या, वास्तुविज्ञान-विद्या, योग-विद्या, ध्यान-विद्या, अलंकार-विद्या, छान्दस्-विद्या, गणित-विद्या प्रभृति** सहस्त्रों विषयों के साथ-साथ मोक्ष के साक्षात् कारणभूत चारित्र-विषयक सत्यार्थ-साहित्य सकल विश्व में पूज्य, स्तुत्य, वंदनीय है।

सिद्धान्त के विषय में षट्खण्डागम-ग्रन्थ, कथा-साहित्य में पद्मपुराण, काव्य-विद्या में चन्द्रप्रभचरित्र, जीवाजीवविज्ञान-विद्या में गोम्मटसार, नीति-विद्या में नीतिवाक्यामृत, भूगोल-विद्या में तिलोयपण्णत्ति, नृत्य-गान-विद्या में संगीत-समयसार, औषध-विद्या में कल्याणकारक और पुष्पायुर्वेद, अध्यात्म-विद्या में समयपाहुड, शब्द-विद्या में जैनेन्द्रव्याकरण, लिपिविज्ञान-विद्या में ब्राह्मीलिपि प्रशिक्षण, नयप्रमाण-विद्या में नयचक्र-न्यायविनिश्च-अष्टसहस्त्री आदि, तर्क-विद्या में प्रमा-प्रमेय, यन्त्र-मन्त्र-तन्त्र विद्या में लघुविद्यानुवाद और भद्रबाहुसंहिता आदि, ज्योतिष-विद्या में तिलोयसार, भारतीय

जैन ज्योतिषादि, सर्वावश्यक चारित्र-विद्या में मूलाचारादि, वास्तुविज्ञान-विद्या में वत्थुसार, ध्यानविद्या में झाणज्झयणपाहुड, ज्ञानार्णवादि, अलंकार-विद्या में अलंकार-चिंतामणि, छान्दस्-विद्या में छन्दशास्त्र, गणित-विद्या में गणितसार आदि अनेकों ग्रन्थ आज भी समुपलब्ध हैं।

जैन साहित्य में भी अधिकतम अपभ्रंश, संस्कृत एवं प्राकृतभाषा में ही है। **जैन वाङ्मय की विषयवस्तु एवं प्रतिपादन-शैली अपने आप में भिन्न एवं शिरमोर है। इस बात को कुछ संस्कृतियाँ मुक्त-हस्त से स्वीकारती हैं और कुछ मूक-हस्तों से, मगर समझते सब लोग सब कुछ ही हैं।** भारतीय साहित्य सम्पदा यद्यपि अपने बौद्धिकबल, आचरण, चिंतन, प्रज्ञा-पटुता से लबालब भरी है तथापि जैन साहित्य सम्पदा के बल पर ही यह बात सार्थक हो पायेगी। अस्तु भारतीय साहित्य सम्पदा में जैन साहित्य का महत्त्व एवं स्थान सर्वोच्चता को प्राप्त है, इसमें किंचित् भी संशय नहीं है।

नीति-विद्या विज्ञान—

नीतिज्ञान सर्वसाधारण जन के लिये सरलता से ग्राह्य है। नीतिज्ञान आपके जीवन में सुख तथा आपके निमित्त से दूसरों के जीवन में शान्ति का साधन बनती है। नीति वह नवनीत है, जिसके नीति वह नवनीत है जिसके कारण जहाँ व्यक्ति सुसंस्कार प्राप्त करता है, वहीं नैतिक आचरण के द्वारा अपने जीवन को प्रतिभावान बनाने के साथ-साथ मोक्षमार्ग प्रशस्त करता है।

नैतिक आचरण के बिना पुरुष न श्रेष्ठ पुरुषार्थ कर सकता है और न ही देश, समाज, परिवार, रिश्तेदारों में अपना अस्तित्व बना पाता है। नीतिवान व्यक्ति के आचरण, वचन और क्रियाओं को सभी लोग प्रमाण तो मानते ही हैं, उनका अनुकरण कर उसे श्रेष्ठता की कसौटी पर परख कर उन जैसे कार्य करने की प्रेरणा प्राप्त करते हैं।

जिन व्यक्तियों का जीवन नीति और नैतिकता के मंजन से परिमार्जित नहीं है, उन्हें सज्जनता का तिलक, महानता की माला और आदरता का आवरण नहीं उडाया जाता है। यह प्रायः लोक में लोकाचार का प्रथम सोपान माना जाता है।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति और उसका महत्व—

जिसकी कभी इति अर्थात् अन्त नहीं होता है, वह नीति है। नीति, द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के आधार पर कभी भी परिवर्तित नहीं होती है। अर्थात् नीति कभी बासी नहीं होती है। नीति और नैतिकाचरण अनादि-अनिधन है। प्रत्येक काल में इसका प्रादुर्भाव रहा है। जब तक नीति रहेगी लोगों में नैतिकता रहेगी नैतिकाचरण का बहुमान रहेगा, तब-तक धर्म फलता-फूलता रहेगा।

जहाँ नीति का पालन या आचरण रहता है, वहीं धर्म रहता है। धर्म के उपदेशक धर्म के मूल सिद्धान्तों का कथन नीति के धरातल पर ही करते हैं।

नैतिक आचरण ही आत्म-सुख-शान्ति, प्रगति, उत्थान, लोकप्रियता एवं आत्मोद्धार का साधन होता है। इसके लिए जो सूत्रों का सृजन महापुरुषों के माध्यम से जन-जन को प्राप्त होता है, वह नीतिसूत्र या नीतिवाक्य कहलाते हैं।

नीतिकार—

नीति-सूत्रों को वही शब्द दे सकता है, जिसने उसे अपने जीवन में आत्मसात कर लिया हो, जिसे प्राप्त कर पूज्यता प्राप्त कर ली हो, वही व्यक्ति ही नीति सूत्रों का सृजन कर सकता है।

नीतिकार वही हो सकता है जिसने अपने आप को तपाया हो, मन को बांधा हो और सभी जीवों में समान जीवत्व-शक्ति को स्वीकार किया हो। दोहरे व्यक्तित्व वाला नीतिकार नहीं हो सकता है। पहले उसे अपने आपको परिमार्जित करना पड़ता है, पश्चात् वह अन्य को परिमार्जित कर सकता और तभी उसके कथन का दूसरों पर प्रभाव पड़ सकता है।

नीति की ऐतिहासिकता प्राचीनकाल में गुरुकुलों में नैतिकता की शिक्षा बौद्धिक रूप से तथा आचरण रूप से गुरुओं के द्वारा प्रदान की जाती थी, जिससे छात्र बाल्यावस्था से ही संस्कारित होना प्रारंभ हो जाता था।

कालान्तर में कथा साहित्य के माध्यम से नीति का कथन जन-जन तक पहुँचने लगा। प्रत्येक घर, चौपाल पर नैतिकता के क्षेत्र में श्रेष्ठता

को प्राप्त महापुरुषों के जीवन वृत्त के माध्यम से नीति को महिमा मण्डित किया गया। जो आत्मोन्नति का साधन ही बनता था।

जैनाचार्य नैतिकता की कसौटी पर खरे उतरने वाले श्रेष्ठ व्यक्तित्व के धनी होते हैं अतः सर्वश्रेष्ठ नीतिकार जैनाचार्य रहे हैं। जिन्होंने अपने द्वारा लिखित ग्रन्थों में नीति श्लोकों को समाहित किया है।

आदिपुराण आचार्य जिनसेन स्वामी, पद्मपुराण श्री रविषेणाचार्य, हरिवंशपुराण श्री जिनसेनाचार्य द्वितीय, क्षत्रचूड़ामणि श्री आचार्य वादीभसिंह सूरी, मदनपराजय एवं नीति निपुण राजर्षि अमोघवर्ष ने सन्यास ग्रहण कर दसवीं शताब्दी में नीति के बहुमूल्य रत्नों के हार की तरह रत्नमाला नामक ग्रन्थ सरल, सुबोध प्रश्नोत्तर शैली में रचकर युगों युगों तक नैतिक जीवन शैली को गति प्रदान की हैं। इस प्रकार अनेक ग्रन्थ आज उपलब्ध होते हैं। जैनागम में अनेक नीति ग्रन्थ नीति श्लोकों से लबालब भरे हुए हैं।

आचार्यों ने नीति के साथ धर्माचरण को स्वीकार कर अपने जीवन को विशुद्ध बनाया। उससे जो प्राप्त हुआ उसे लिपिबद्ध कर जन-जन तक पहुँचाने का सफल प्रयास किया है।

शताब्दियाँ बीत जाने पर भी इन ग्रन्थों को लोग उसी अभिरुचि से पड़ते हैं जैसे उस काल में पड़ते थे, जब वो लिखे गये थे। वे नीतियाँ आज भी उतनी ही प्रासंगिक हैं जितनी पहले थीं। **नीति कभी बासी नहीं होती, वह हमेशा 'सद्य' अर्थात् ताजी ही होती हैं।** नीति ग्रन्थ लेखन की प्रक्रिया प्रायः चलती ही है, कभी कम कभी अधिक किन्तु नीति लिखी जरूर गई है।

नीति का कोई धर्म नहीं—

नीति किसी धर्म विशेष की नहीं होती है। कोई धर्म वाला ये भी नहीं कह सकता कि यह नीति हमारे धर्म की है। नीति सभी धर्मों में होती है, किन्तु सामान्य नीति सभी धर्मों में होती है, जो विशेष नीति होती है वह उस धर्म का मौलिक सिद्धांन्त कहा जा सकता है। **धर्म नीतियों का भण्डार होता है। जिस धर्म में नीति नहीं होती उसे धर्म नहीं कहा जा सकता है।**

धर्म और नीति का अविनाभावी संबंध है। धर्म नीति है या नीति धर्म है इसके दोनों कथन समीचीन हैं। धर्म नीति का अनुसरण सभी करते

हैं, किन्तु जो धर्म नीति को आचरण में उतार लेते हैं; वे महात्मा, साधु-संत, धर्म-गुरु, संयमी या मोक्षमार्गी कहे जाते हैं।

नैतिकता आज भी श्रेष्ठता का पैमाना है, अतः श्रेष्ठ समाज में नैतिक मूल्यों की अवधारणा आज भी जीवन्त है। यही कारण है कि शिक्षा के क्षेत्र में नैतिकता, नैतिक आचरण का आज भी महत्त्वपूर्ण स्थान है।

नीति का संबंध किसी धर्म से नहीं, अपितु सभी धर्मों का संबंध नीति से है। जब तक नीति और नैतिकता है, तब तक धर्म का अस्तित्व है। श्रेष्ठ समाज की आधारशिला बिना नीति के नहीं रखी जा सकती है। नीति ही महत्त्वपूर्ण धर्म है। जो मानव मात्र को उपयोगी है।

नीति के भेद—

नीति के अनेक भेद हो सकते हैं, किन्तु प्रमुख रूप से नीति के कुछ प्रकार बहु प्रचलित हैं।

1. धर्मनीति 2. राजनीति 3. कूटनीति 4. शिक्षानीति 5. कृषिनीति 6. व्यापारनीति 7. रक्षात्मकनीति 8. आध्यात्मिक नीति 9. विनयात्मक नीति 10. शामनीति 11. सुखवर्धकनीति 12. व्यक्तित्वनिर्माण नीति इत्यादि।

धर्मनीति–आत्मकल्याण के लिए मोक्षमार्ग पर चलने के लिए जो सदाचरण किया जाता है, वह धर्मनीति है।

राजनीति–जिस नीति से राज्य व्यवस्था सुचारु रूप से संचालित होती है, वह राजनीति है।

कूटनीति–कार्य की सिद्धि के लिए छलपूर्वक जो कार्य योजना की जाती है, वह कूटनीति है। राजा प्रायः इन सब नीतियों का प्रयोग करते हैं। सामान्य से सभी संसारी भी इस नीति से कार्य सिद्धि करते हैं।

शिक्षानीति–जिस नीति या सिद्धान्त से श्रेष्ठ शिक्षा प्रदान की जाती है, वह शिक्षानीति है।

कृषिनीति–जिस नीति से समय के अनुरूप फसल को सुरक्षित रखकर अधिक उपज प्राप्त की जाती है, वह कृषिनीति कहलाती है।

व्यापारनीति–जिस नीति के द्वारा व्यापार के माध्यम से अधिक आय प्राप्त की जाती है, वह व्यापारनीति है।

रक्षात्मकनीति–जिस नीति के माध्यम से हम स्व-पर की रक्षा कर पाते हैं, वह रक्षात्मक नीति है।

सत्यार्थ-नीतिः

आध्यात्मिक नीति–जिस नीति से हम समय अर्थात् आत्मा की रक्षा कर पाते हैं, आत्मिक दृष्टि को जान पाते हैं, वह आध्यात्मिक नीति है।

विनयात्मक नीति–जिस नीति के द्वारा आपके अंतस् में गुणी एवं गुणों के प्रति भूतार्थ विनय प्रकट हो जाये, वह विनयात्मक नीति है।

शामनीति–जो नीति शान्तिपूर्वक कार्य सिद्धि में सहायक हो, वह शामनीति है।

सुखवर्धकनीति–जिस नीति से दुःखों की इति और अतिसुख की प्राप्ति हो, वह सुखवर्धक नीति है।

व्यक्तित्वनिर्माण नीति–जिस नीति के माध्यम से सर्वगुण संपन्न व्यक्तित्व के साथ-साथ आकर्षण व्यक्तित्व बनता है, वह व्यक्तित्व निर्माण नीति है।

प्रस्तुत संस्कृत ग्रन्थ सत्यार्थ-नीतिः

प्रस्तुत ग्रन्थ नीति का अभिनव ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ का प्रमाण भले ही 400 सूत्र प्रमाण है, किन्तु प्रमेय अत्यन्त विस्तृता है। इस युग का नीति विषयक सुगमतम ग्रन्थ है सत्यार्थनीतिः। यह ग्रन्थ युवा, प्रौढ़, वृद्ध सभी वर्गों के पाठकों के लिये उपयोगी है। प्रस्तुत ग्रन्थ के विषय में हम कुछ बिन्दुओं पर चर्चा करते हैं–

ग्रन्थ का विषय-विवेचन—

सम्प्रति काल में भटकती हुई मानवता के लिये यह ग्रन्थ चिन्तनीय है। छोटे-छोटे सूत्रों के माध्यम से ग्रन्थकार ने बुद्धि एवं गुणवर्धन कराने का कार्य किया है। इस ग्रन्थ में अनेक विषय गर्भित हैं। जैसे-रक्षात्मक, प्रीतिवर्धनात्मक, उपकारात्मक, पुण्यपापसम्बोधक इत्यादि। यहाँ हम कुछ विषयों को स्पर्श करते हैं। यथा-प्रथमसूत्र में दूसरे के मन को जीतनेवाली नीति में कहा है–''**सेवा-प्रशंसाहारात्-परचित्तविजयः**।'' अर्थात् सेवा, प्रशंसा और भोजन से दूसरों के मन को जीता जा सकता है।

आगे नीति 14 में यश-कीर्ति के लाभार्थ कहा कि–''**पुण्यानुगामी यशः**।'' अर्थात् यश और कीर्ति पुण्य के पीछे-पीछे ही चलती है।

सूत्र 23 में सर्वदुर्लभ कार्य की सिद्धि के लिये कहते हैं कि–''**दुर्लभकार्यमपि सुलभो गुरुप्रसादात्**।'' अर्थात् दुर्लभ से दुर्लभ काम भी गुरु भगवन्तों के प्रसाद से सुलभ हो जाते हैं।

सत्यार्थ-नीतिः

नीतिसूत्र 31 में कृतज्ञता ज्ञापित करने की भावनायुत नीति में लिखते हैं कि–''**ये दुःखेषु सहायकास्तान् सुखेषु मा विस्मर।**'' अर्थात् जो मानव दुःखों के दिनों में सहायक हों, उन्हें सुख के दिनों में नहीं भूलें।

नीतिसूत्र 32 में आवश्यक नीति के माध्यम से कहते हैं–''**यथासमयं परिवर्तनं कुर्यात् तु बुद्ध्या।**'' अर्थात् समय के अनुसार परिवर्तन करें, मगर बुद्धिपूर्वक ही परिवर्तन करें।

नीतिसूत्र 99 में सुखी बनाने वाली नीति में कहते हैं कि–''**यस्य गृहे शान्तिर्स हि सर्वोत्कृष्टसुखी।**'' अर्थात् सबसे सुखी वही है, जिसके घर में शान्ति है।

आगे एक लघुसूत्र में–''सज्जनों की सम्पत्ति धैर्य है'', ऐसा निर्देश भी दिया। आगे नीति सूत्र 123-124 और 125 में जगत् भ्रम को दूर करते हुए कहते हैं कि–''**पूज्यनीय गुण है, न कि जाति।**'' ''पाप दुःख का कारण है।'' तथा ''पापों में सुख की कल्पना अज्ञान है।''

नीतिसूत्र 143 में जीवनमृत की कल्पना को कहते हुये लिखा है–''**यस्य चित्ते धर्मवासो नास्ति, स मृत इव।**'' अर्थात् जिसके चित्त में धर्म का वास नहीं है, वह मृत तुल्य है।

नीतिसूत्र 159 में सर्वदुःखहरण नीति का व्याख्यान करते हुए कहा कि–''चित्त प्रसन्न रहने से मनुष्य के सारे दुःख दूर हो जाते हैं।'' आगे नीतिसूत्र 177 में दुःख/पाप घटानेवाली नीति में कहते हैं–''गलति करना पाप है, गलति छुपाना और बड़ा पाप है।''

नीतिसूत्र 183 में महान कार्य कैसे करें, इसको बताते हुए कहा कि–''**यो न करोति समयमूल्यं, स कदापि किमपि श्रेष्ठकार्यं न करोति।**'' अर्थात् जो समय का मूल्य नहीं करता, वह कभी कोई महान् कार्य नहीं करता।

नीतिसूत्र 229 में सफलता प्राप्ति के लिये कैसा व्यक्तित्व बनाये, इसको कहते हैं–''**प्रसन्नचित्तो नम्रश्च प्रत्येकस्थाने साफल्यं लभेते।**'' अर्थात् प्रसन्नचित्त और नम्र व्यक्ति हर स्थान पर सफलता प्राप्त करते हैं।

नीतिसूत्र 275 में महानता का रहस्य बताते हुए कहा कि–''**विश्वासे विश्वासः, स्वस्मिन् विश्वासश्चेश्वरे विश्वासः श्रेष्ठता-रहस्यम्।**'' अर्थात्

विश्वास पर विश्वास, स्वयं में विश्वास और ईश्वर में विश्वास; यही महानता का रहस्य है।

नीतिशास्त्र 290 में शामनीति बतलाते हुए कह रहे हैं कि– ''**शान्तिरेव विकासः, शान्तिरेव शक्तेर्मूलाधारश्च।**'' अर्थात् शान्ति ही विकास है, शान्ति ही शक्ति का मूलाधार है।

नीतिसूत्र 302 में व्यक्तित्व विकास के विषय में कहते हैं कि– ''**शिक्षार्थो व्यक्तित्वविकासो, न तु केवलं पठनम्।**'' अर्थात् शिक्षा का अर्थ पढ़ना नहीं है, अपितु व्यक्तित्व का विकास है।

नीतिसूत्र 306 में शिक्षाविषयक नीति में कहते हैं–''**शिक्षितमानव अशिक्षितमानवेभ्यस्तावतो वरो, यावन्तो जीवितमानवा मृतकेभ्यः।**'' अर्थात् शिक्षित मनुष्य अशिक्षित मनुष्यों से उतने ही श्रेष्ठ हैं, जितने जीवित मनुष्य मृतकों से।

नीतिसूत्र 314 में लक्ष्मीवास के विषय में कहते हैं कि–''**आलस्ये दरिद्रताभावोऽस्त्यनालस्ये लक्ष्मीवासः।**'' अर्थात् आलस्य में दरिद्रता का भाव है, अनालस्य में लक्ष्मी का वास है। आगे भी कहा कि–''सुन्दर आचरण सुन्दर शरीर से अच्छा है।'' ''सांसारिक जीवन में लक्ष्मी का साम्राज्य है, न कि बुद्धि का।''

सूत्र 326 में कहा कि–मनुष्य के स्वाभाविक मित्र कौन-कौन हैं? सो कहा–''**विद्या, शूरवीरता, दक्षता, बल और धैर्य; ये मनुष्य के स्वाभाविक मित्र हैं।**'' और भी कहा है कि–''**व्यक्ति के व्यक्तित्व का बखान उसकी भाषा और चारित्र करते हैं।**'' ''**सम्पूर्ण सद्गुण विनय के आधीन हैं।**'' आगे ग्रन्थ में विभिन्न विषयों के बारे में भी कहा है। उन्हें देखते हैं–

* **गुणों की प्राप्ति के साथ-साथ, उन्हें सुरक्षित भी रखें।**
* **जो समय बचाते हैं, वे धन और स्वयं को बचाते हैं।**
* **पाप आत्मा का शत्रु है और सद्गुण आत्मा का मित्र।**
* **सज्जन पीड़ा सहन करते हैं, पीड़ा प्रदान नहीं करते।**
* **परमात्मा की दृष्टि से सदाचारी सदा सम्माननीय है।**
* **सहयोग की भाषा हर प्राणी को समझ में आती है।**
* **धन-सम्पदा की अपेक्षा आत्मसम्मान का संग्रह करो।**

सत्यार्थ-नीतिः

* **मूर्खों का सम्मान न करें, सज्जनों का अपमान न करें।**
* **सत्य की चिंगारी असत्य के महल को भस्म कर सकती है।**
* **असत्य का सम्मान आपके जीवन की सबसे बड़ी भूल है।**
* **सत्य स्वीकारते वक्त कड़वा लगता है, मगर स्वीकारने के बाद जीवन को मधुरता देता है।**
* **धर्म का सर्वप्रथम साधन देह की शुचिता और स्वस्थता है।**
* **दुर्वचनों पर क्रोध न उत्पन्न होना, कठिनतम कार्य है।**
* **विनम्रता, जिज्ञासा और सेवा से ज्ञान की लब्धि होती है।**

ग्रन्थकार की गुरु परम्परा—

भगवान् कुन्दकुन्दाचार्य की इस शुद्ध-विशुद्ध निर्दोष परंपरा में 19-20वीं शताब्दी में आद्याचार्य 108 श्री आदिसागर जी हुये जिनका जन्म अंकलीकर ग्राम में हुआ। आप घोर-तपस्वी, अल्पाहारी, स्वदीक्षित, वनवासी, निर्दोष चारित्र धारक श्रमणाचार्य थे।

इसी शुभंकरी अदूषित-परंपरा में अट्ठारह भाषाविद्, मंत्रवादी, तीर्थभक्तशिरोमणी, बहुप्रभावीव्यक्तित्व के धनी, विश्वकीर्तिलब्ध आचार्य भगवन् महावीरकीर्ति जी मुनिराज हुये, आपने श्री आदिसागर आचार्य भगवन् के पट्टाचार्य पद को सुशोभित किया और गुजरात के मेहसाणा ग्राम में समाधि की प्राप्ति की।

आचार्यदेव महावीरकीर्ति जी की कीर्ति बढ़ानेवाले, जिनशासन के परमभक्त और उनके प्रथम शिष्य हुये आचार्यभगवन् श्री विमलसागर जी मुनिराज। आप अष्टांग महानिमित्तज्ञानी, परमोपकारी, चेतनाचेतन तीर्थोद्धारक तथा वात्सल्य की साक्षात् प्रतिमूर्ति ही थे।

आचार्यदेव विमलसागर जी के शिष्य हुये उग्रतपस्वी, मासोपवासी, धर्म दिवाकर आचार्य श्री सन्मतिसागर जी यतिराज। आप आचार्य महावीरकीर्ति जी मुनिराज के पट्टाचार्य पद पर आसीन हुये थे। आप तपस्या की साक्षात् प्रतिमूर्ति रहे। वैज्ञानिक भी आपके तप से आश्चर्यान्वित थे।

पूर्वोक्त उभयाचार्यों से दीक्षित अर्थात् तपस्वी-सम्राट् आचार्य श्री सन्मतिसागर जी से क्षुल्लक दीक्षा धारक तथा वात्सल्य-रत्नाकर आचार्य श्री विमलसागर जी से निर्ग्रंथ दीक्षा से सुशोभित आचार्य श्री विरागसागर जी हुये। आप स्वात्मानुशासक, सुविशाल चतुर्विध संघ के नायक,

सिद्धान्तमर्मज्ञ, अनेकों संस्कृत-प्राकृत टीकाओं के कर्ता हैं। आपने अपने अनेकों सुयोग्य श्रमण शिष्यों को गणीपद और सुयोग्य आर्यिकाओं को गणिनीपद प्रदान किये, इसलिये सर्वजगत् आपको गणाचार्य के नाम से भी जानते हैं।

समाधि शिरोमणि, सिद्धान्त-मर्मज्ञ, गणाचार्य भगवन के प्रियाग्र, योग्यतम, प्रथम दीक्षित श्रमणाचार्य वर्तमान पट्टाचार्य विशुद्धसागर जी के प्रियाग्र शिष्योत्तम श्रुतसंवेगी महाश्रमण आदित्यसागर जी इस लघुकाय बहुप्रमेय युक्त ग्रन्थ के कर्ता हैं। आप बहुप्रज्ञावंत, बहुपरिश्रम और बहुप्रतिभासम्पन्न होने के साथ-साथ बहुभाषाविद् भी हैं।

ग्रन्थकार का परिचय (सम्पादक की कलम से)

भारत वर्ष के हृदय प्रदेश में संस्कारधानी कहे जाने वाले जबलपुर महानगर में पिता राजेश और माँ वीणा के घर के आँगन में **24 मई 1986** को एक ऐसे शिशु का जन्म हुआ, जो सौभाग्य और समृद्धि का पर्याय था, जिसका आगमन इस धरापटल पर पुण्य-चन्दन के लेपन के समान था। नियति ने उसे नाम दिया "**सन्मति**"। जिसका नाम सन्मति यानी भगवान महावीर स्वामी का पर्याय हो, उसमें '**गुरुता**' के सद्गुणों का विकसित हो जाना सहज ही है, शायद इसलिए भी **सन्मति भैया को "गुरु भैया"** के नाम से भी जाना जाने लगा। अठखेलियों और शरारतों के प्रेमी बालक सन्मति किसी कल्पवृक्ष की शाखा के समान बढ़ने लगे, अंतर बस इतना था की कल्पवृक्ष उसके समक्ष कल्पना करने वालों को कुछ देता है, परंतु आप भविष्य में बिन मांगे ही सबको सब कुछ देने वाले थे। सन् 1998 में महावीर जन्मकल्याणक के दिन से ही मात्र 12 वर्ष की उम्र में सन्मति ने पिता के व्यवसाय में हाथ बँटाना शुरू किया, और देखते ही देखते सन् 2008 तक एक प्रतिष्ठित व्यापारी के रूप में उभरे। 2006 में बी.बी.ए. की डिग्री एवं 2008 में एम.बी.ए. (**गोल्ड मेडेलिस्ट**) की डिग्री पूर्ण कर अपनी लौकिक शिक्षा की यात्रा को विराम दिया, परंतु आपकी उत्कृष्ट चिन्तनधारा एवं अतुलनीय प्रज्ञा इस लौकिक शिक्षा से कई गुना अधिक थी।

सन् 2008 में आचार्य श्री विशुद्धसागर जी यतिराज के दर्शन कर सन्मति की हृदयभूमि पर गुरु समर्पण और वैराग्य का ऐसा अंकुरण

हुआ जिसने 'सन्मति' को सदा के लिये 'विशुद्ध-कल्पतरु' की छांव में रहने को उद्यत कर दिया और ऐसा हो भी क्यों न। शायद नियति जानती थी कि **'जो जैसा बनने वाला है, उसे वैसे के ही साथ रखना जरूरी है।'** उज्जैन की धरती पर सन् 2010 वह वर्ष बना, जब गुरु आशीष से सन्मति के मस्तक पर आजीवन ब्रह्मचर्य का तिलक लग गया और अपनी परिपक्व मेधा, उत्कृष्ट संस्कारशीलता, अनुपम गुरु-समर्पण एवं उत्कृष्ट विचार मंजूषा के कारण 08 नवम्बर 2011 को **'सन्मति भैया'** यानी **'गुरु भैया'** को अपने इस मानव जीवन की सार्थकता का प्रमाण युग गौरव आचार्य श्री विशुद्धसागर जी के कर कमलों से 'निर्ग्रन्थ' पद के रूप में मिला और गुरु भैया अब **मुनिश्री आदित्यसागर जी** बन गये। सन् 2012 में मात्र 21 दिनों में आपने प्राकृत भाषा का अध्ययन पूर्ण करके अपनी असाधारण बुद्धिलब्धि का परिचय दिया। 2016 में गुरुमुख से संस्कृतभाषा एवं 2018 में बेंगलुरु जाकर द्रविड़ीयन भाषाएँ, अपभ्रंश, हाड़े कन्नड़, नाडो कन्नड़, होसो कन्नड़ एवं तमिल भाषा जैसी 16 लिपियों में निष्णात हुये। सन् 2018 से 2024 तक बेंगलुरु, सागर, इंदौर, भीलवाड़ा एवं कोटा जैसे शहरों में चातुर्मास के माध्यम से जिनशासन की अभूतपूर्व प्रभावना की। **जिनशासन पर आने वाली विपदाओं अथवा कुरीतियों के विरुद्ध आपकी निर्भयता और शब्दशक्ति अतुलनीय है।**

देश के 9 राज्यों में लगभग 40,000 किलोमीटर विहार करते हुये, आपने 50000 श्लोक प्रमाण सम्यक् साहित्य की रचना की, जिसमें 45 प्राकृत, 20 संस्कृत एवं 170 से अधिक हिन्दी रचनाएँ सम्मिलित हैं। साथ ही 25 ग्रंथों का सम्पादन आपके श्रीकर से हुआ।

सोशल मीडिया के माध्यम से जैन-जैनेत्तर तक सर्वाधिक सुने जाने वाले जैन संत, युवाओं के प्रेरणा स्त्रोत, 'आध्यात्मिक प्रबंधन','नीतिकक्षा' एवं 'सही बातें' जैसी रचनाओं के माध्यम से मोटिवेशन और साहस के पर्याय बन चुके पूज्य श्रुतसंवेगी महाश्रमण श्री 108 आदित्यसागर जी मुनिराज ने प्राचीन एवं पूर्वाचार्यों के श्रुत (साहित्य) के संरक्षण हेतु ताड़पत्र एवं ताम्रपत्र संबंधी क्रान्ति की शुरुआत की एवं अभी तक लगभग 1000. शास्त्रों का संरक्षण कराया एवं वर्तमान में जारी है। आपकी साधना, जाप एवं मंत्रज्ञान अतिशय रूप

प्रभावशाली है, जिसके माध्यम से अनेकों गुरुभक्तों के जीवन में असाधारण बदलाव देखने में आते हैं।

जिनके संघ में वर्तमान समय में पूज्य **श्रुतप्रिय श्रमणरत्न श्री 108 अप्रमितसागर जी, सहजानंदी श्रमणरत्न श्री 108 सहजसागर जी एवं क्षुल्लक श्री 105 श्रेयससागर जी मुनिराज रत्नत्रय से शोभायमान हो रहे हैं।**

ॐ Ignoray नमः, ॐ Deletay नमः, आपका I Can आपके IQ से बड़ा होना चाहिये और नित्यं-आदित्यं-आनन्दं जैसे ऊर्जात्मक एवं सकारात्मक जीवन के मंत्र देने वाले पूज्य श्रुतसंवेगी महाश्रमण श्री 108 आदित्यसागर जी मुनिराज इस धरापटल पर साधुता की जीवंत परिभाषा हैं।

ग्रन्थ का लेखन-काल एवं स्थान—

यह संस्कृत भाषा में रचित एक अभिनव ग्रन्थ है। इसका लेखन आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा को वीर निर्वाण संवत् 2551 में हाडोती के नगर कोटा में प्रारम्भ हुआ और श्रावणमास की अमावस्या को कोटा वर्षावास में ही पूर्ण हुआ। यह ग्रन्थ अत्यन्त अल्प समय में लिखा गया महान् ग्रन्थ है।

इस महान् ग्रन्थ के बारे में जितना लिखा जाये उतना कम है। यह सत्यार्थनीति ग्रन्थ अनाज्ञी को ज्ञानी बनाने वाला है, अनैतिक को नैतिक करने वाला है। यह ग्रन्थ आपके अन्दर अनेकों गुण प्रकट कर सकता है। मेरे अनुभव के अनुसार यह ग्रन्थ आपके अन्दर साहस, विनोदगुण, शान्तता, नियंत्रण, संतुष्टि, आत्मनिर्भरता, भद्रता, धैर्य, स्वतंत्रता, निर्भीकता, सक्रियता, संतुलन, नेतृत्वकला, सशक्ता सहजता इत्यादि अनेक गुणों को प्रकट करेगा। अतः इसका पठन-पाठन अवश्य करें।

श्रुतसंवेगी महाश्रमण
आदित्यसागर महाराज

सम्पादकीय

साहित्य जगत् में जितना महत्त्व महाकाव्यों, खण्डकाव्यों मुक्तककाव्यों को दिया जाता है, उनके रसास्वादन से आनन्द की प्राप्ति होती है, उतना ही महत्त्व साहित्य में वर्णित सूक्तियों का है। उससे काव्यों में रसास्वादन में वृद्धि होती है। उससे भी समाज रसास्वादन प्राप्तकर आनन्दित होता है। **सूक्तियाँ समाज के लिये शिक्षा प्रदान करती है। यदि समाज इन शिक्षाओं को अंगीकार करें तो उसमें परिवर्तन उत्पन्न हो सकता है। सूक्तियों का आकार छोटा होता है, किन्तु प्रभाव बहुत बड़ा।** इनको कण्ठस्थ करने में कठिनाई नहीं होती है तथा सभी वर्गों के दैनिक जीवन में इनका प्रयोग देखा जाता है। भारतीय वाङ्मय में सूक्तियों का प्रयोग प्राचीन काल से ही होता आ रहा है। वे सूक्तियाँ अनेक तरह से व्यक्ति के मन को बदलने में अथवा संकट की स्थिति में संभलने में सहायक होती है। यथा- **आरंभा पुन्नविवज्जियाण कत्तो फलं देंति**- पुण्य से रहित आरम्भ कहाँ फल देता है।

अर्थात् वर्तमान परिस्थिति में व्यक्ति केवल आरम्भ अर्थात् पुरुषार्थ करता है, उस पुरुषार्थ को फलीभूत करने हेतु शुभ कार्यों के माध्यम से पुण्य का उपार्जन नहीं कर रहा है। ऐसे व्यक्यिों के लिये संकट की स्थिति में यदि यह सूक्ति ज्ञात कराई जाये, तो वह धर्म की ओर अग्रेषित होता है।

इसी प्रकार की सूक्तियों के माध्यम से सामाजिक परिवेश धार्मिक रूप में परिवर्तित हो सकता है, इन सूक्तियों से जहाँ व्यक्ति में परिवर्तन संभव है, वहीं इनकी शिक्षा से परिवार, समाज, राष्ट्र भी परिवर्तन की ओर अग्रेषित होगा।

सूक्तियाँ सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक रही हैं। सूक्तियों के श्रवण या पठन से मात्र मन ही आलोकित नहीं होता, अपितु मस्तिष्क भी आलोकित होता है। अत: इसका सम्बन्ध मन और बुद्धि दोनों में होता है।

सूक्तियाँ- सूक्ति, साहित्य-उपवन में से चुने हुए कुछ शब्द-पुष्पों

का सुनियोजित, सुन्दर संयोजन है। सूक्ति शब्द शोभन उक्ति के अर्थ में प्रयुक्त होती है। यह सु उक्ति शब्द से दीर्घ सन्धि पूर्वक निष्पन्न हुआ है। सूक्ति शब्द का प्रयोग उत्तम उक्ति या कथन के लिये किया जाता है। **सूक्ति का शाब्दिक अर्थ है सु-सुन्दर, सुष्ठुः उक्ति-वचन, वाक्य अर्थात् वह वाक्य जो सुन्दर, मनोहारी एवं कर्णप्रिय हो और साथ में हितकारी हो।** अहितकारी वाक्य सूक्ति नहीं होता। अनुभवों का आधार, कुछ विशिष्ट शब्दों का कलात्मक संयोजन, मर्मस्पर्शी शैली और संक्षिप्तता सूक्ति की विशेषताएँ हैं। सूक्ति में शाश्वत् सत्य की धरा पर जीवन के गहन चिन्तन व अनुभवों का सार होता है। हिन्दी भाषा में जिस प्रकार कहावतें प्रसिद्ध होती है। उसी प्रकार प्राकृत या संस्कृत भाषा में सूक्तियाँ प्रसिद्ध है, जिनका कार्य पाठक को अच्छी लगने वाली उस उक्ति से होता है, जो उसके हृदय को शोभन लगती है तथा जिसके कहने अथवा सुनने से हृदय को सीख के साथ-साथ आनन्द की प्राप्ति भी होती है।

सूक्तियाँ अमूल्य रत्न हैं। पृथ्वी पर तीन रत्न बताए गए हैं - जल, अन्न एवं सुभाषित (सूक्तियाँ)। सूक्ति और सुभाषित दोनों ही उद्देश्यों की अपेक्षा से समान हैं। अन्तर केवल इतना है कि सूक्ति श्लोकार्थ अथवा श्लोक के एक चरण में होती है और सुभाषित पूर्ण श्लोक होता है। ये दोनों मुक्तककाव्य में परिगणित होते हैं। दोनों की पद रचनाएँ पूर्ण होती हैं। इनमें परस्पर सम्बन्ध अपेक्षित नहीं होता। सूक्तियाँ मानव के अन्तर्निहित सौन्दर्य को व्यक्त करती है, सामाजिक जीवन को जीने योग्य बनाती हैं और अद्भुत आत्मविश्वास प्रदान कर कार्य करने की प्रेरणा देती हैं।

सूक्तियों का प्रयोग- काव्यों में अपनी बात को प्रस्तुत करते समय लोकजन्य कहावतों को प्रस्तुत करने के लिये सूक्तियों का प्रयोग किया जाता था। ये सूक्तियाँ लोकभाषा में इतनी प्रसिद्ध होती हैं, कि इनकी व्याख्या नहीं करने पर भी पाठक गण सूक्ति की पंक्ति से इसके कथन को विस्तार से समझ जाते हैं। जैसे-**जहा राया तहा पया होइ**, अर्थात् जैसा राजा होता है, वैसी ही प्रजा होती है। इस सूक्ति से राजा और प्रजा के मध्य जो भी नैतिक, अनैतिक, पारिवारिक, सामाजिक आदि व्यवहार होता है, वह सभी पाठक को सूक्ति के माध्यम से समझ में आ जाता है। **सूक्ति गहन**

बात को संक्षिप्त और सरल तरीके से समझाने का माध्यम है। यह काव्यों में गद्यरूप अथवा पद्यरूप में प्रयुक्त होती है। सूक्तियों का प्रयोग साहित्य की सभी विधाओं में किया जा सकता है, चाहे वह नाट्यशास्त्र की विधा हो अथवा काव्यशास्त्र की विधा हो।

सूक्तियाँ जाति, धर्म, समाज, देश-विदेश की सांस्कृतिक स्थिति का परिचायक तो होती ही हैं, साथ ही अतीत में घटित सामाजिक घटनाओं एवं तथ्यों का ज्ञान भी कराती हैं और भावी संभावनाओं के सम्बन्ध में सतर्क-सावधान भी करती हैं। साहित्य-सर्जक अपने मत या विचार के पोषण के लिए अथवा अपनी अभिव्यक्ति को सरस, सटीक एवं मर्मस्पर्शी बनाने के लिए सूक्तियों का प्रयोग करते हैं।

सूक्ति का प्राण है संप्रेषणीयता। सूक्ति बहुत कम शब्दों में अपने कथ्य की अभिव्यक्ति करती है, जो गम्भीर होती हैं, इसीलिए कथन की पुष्टि में सूक्तियाँ बहुत सहायक होती हैं और श्रोता के मन पर सीधा प्रभाव डालती हैं।

साहित्य जगत् में तो सूक्तियों का प्रयोग बहुलता से पाया जाता ही है। झोंपड़ी से लेकर महलों तक, शिक्षित-प्रशिक्षित सभी वगों में अपने दैनिक बोल-चाल में भी सूक्तियों का प्रयोग सामान्य बात है। जीवन के प्रायः सभी क्षेत्रों, विषयों, अंगों, यथा-नैतिकता, गुण, परम्पराएँ, विश्वास, लोक-व्यवहार, सुख-समृद्धि, आपत्ति-विपत्ति, धार्मिक-सिद्धांत, उत्सव-त्यौहार आदि सभी से संबंधित सूक्तियाँ जनसामान्य में प्रचलित व साहित्य में विद्यमान है। उल्लिखित है कि एक ही अभिप्राय को द्योतित करने वाली सैकड़ों सूक्तियाँ विश्व की विभिन्न भाषाओं में उपलब्ध होती हैं।

सूक्तियों की लोकप्रियता उनकी गुणवत्ता के कारण है। सूक्तियाँ साहित्य-दोहन से प्राप्त अमृत हैं। वास्तव में सूक्तियाँ कालजयी, देश-काल की सीमा से मुक्त और अमर होती हैं।

सूक्तियाँ प्रायः दो कारणों से अत्यधिक प्रिय एवं अभिरुचि का विषय रही हैं। एक तो ये दुरूहता से मुक्त होती हैं। इनको समझने में कठिन

श्रम एवं साधना की अधिक अपेक्षा नहीं रहती, दूसरे ये सरलता से कण्ठस्थ हो जाती है तथा समुचित अवसर पर आवश्यक प्रभाव उत्पन्न करने के लिए इनका प्रयोग होता रहता है।

सूक्तियों का महत्व- साहित्य, धर्म, दर्शन आदि की सतत प्रवाहशील धाराओं के साथ-साथ सूक्तिधारा भी प्रारम्भ से ही अविरल रूप से प्रवाहित है। जीवन की गहन अनुभूतियों को भारत के मनीषी आचार्यों, मुनियों, कवियों आदि ने काव्यमयी भाषा में जनमानस के कल्याण के लिए तथा लोककल्याण के लिए प्रस्तुत किया है। इस प्रकार सूक्तियाँ भूतकाल की उपलब्धियों का सार तो हैं ही, वे वर्तमान युग के लिये पथ-प्रदर्शिका भी हैं। नैतिक उत्थान के प्रेरक अनेक पद अथवा पद्यात्मक रचनाएँ सूक्तियों के रूप में समाज में प्रचलित हो गई हैं, जो कठिन एवं गहन समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करके समाज के लिए वरदान सिद्ध हुई हैं।

सूक्तियाँ काव्य का महत्वपूर्ण अंग है। कभी-कभी तो अर्थ गौरव पूर्ण एक सूक्ति सम्पूर्ण काव्य को मूल्यवान् बना देती है और कभी-कभी वह स्वयं सैकड़ों ग्रन्थों की अपेक्षाकृत अधिक मूल्यवान् हो जाती है।

आचार एवं व्यवहार सम्बन्धी इन सूक्तियों के महत्त्व को जितना प्रतिपादित किया जाये, उतना कम होगा। मनीषियों ने अपनी अगाध अन्तर्चेतना एवं मनन के द्वारा समाज के लिए सूक्ति-धारा प्रवाहित करने का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। जीवन के सराग और वीतराग इन दोनों पक्षों की ओर उनकी दृष्टि रही है। दोनों ही पक्षों से सम्बन्धित सूक्तियों का अभिप्रेत समाज का उन्नयन करना रहा है।

सूक्तियों का विकासक्रम- साहित्य में सूक्ति तत्त्व पूर्णरूप में विकसित हुआ है। इसके विकास क्रम पर दृष्टिपात करने से इसका स्वरूप स्पष्ट हो जाता है। विकास की प्रथम अवस्था है- निर्देश। इसमें किसी व्यक्ति विशेष को लक्ष्य करके उपदेश दिया जाता है। यह उपदेश नैतिक, धार्मिक आदि किसी भी विषय का हो सकता है। विकास के दूसरे चरण में सूक्ति

व्यक्ति से उठकर समष्टि तक पहुँच जाती है। अब वह केवल व्यक्तिपरक न रहकर समाज में फैल जाती है।

सूक्तियों में विस्तार का अभाव होता है, पर उनकी संक्षिप्ति सहज ही तीव्रता में परिणत हो जाती है। वह तीव्रता मानव को कर्मठ बनाने में और सही मार्ग पर चलने में सहायक होती है।

सूक्तियों का उद्देश्य-भारत में प्राचीनकाल से ही सूक्ति-सुभाषित संग्रहों की सुदृढ़ परम्परा चली आ रही है। यत्र-तत्र बिखरी हुई दुर्लभ सामग्री को एक मंजूषा में संयोजित एकाश्रित, संगृहीत करना, जिससे उसके गौरव-मूल्य-महत्त्व आदि से लाभ लेना मानव के लिए सुलभ हो सके, यही मुख्य उद्देश्य होता है सूक्ति संग्रह का।

ये सूक्तियाँ आचार-विचार, लोक-परलोक, जीवन-मृत्यु आदि विषयों से सम्बन्धित हैं। इनमें कहीं गम्भीर दार्शनिकता का पुट है, तो कहीं सहज व्यावहारिकता की झलक। कहीं सदाचार का पाठ है, कहीं परोपकार, दान, करुणा, आदि सुसंस्कारों की शिक्षा है, तो कहीं अनीति के दुष्परिणामों से अवगत कराकर उनके लिये वर्जना। कही लौकिक धर्म की धारा प्रवाहित है, तो कहीं वैराग्य की सरिता से ओतप्रोत है।

सूक्तियों के उद्देश्यों को निम्न प्रकार से भी कहा जा सकता है-

1. सूक्तियाँ समाज में व्याप्त बुराईयों को परिलक्षित करके उनके उन्मूलन हेतु मार्ग प्रशस्त करती हैं।
2. सूक्तियाँ शाश्वत् एवं सार्वभौमिक होने के कारण उनका प्रभाव तीनों कालों में पड़ता है।
3. सूक्तियाँ समाज को स्वच्छ एवं सुसज्जित करने में अग्रणी भूमिका का निर्वाह करती हैं।
4. सूक्तियाँ छोटी से बात से विस्तृत संदेश देने का कार्य निश्चित करती है।
5. सूक्तियों के माध्यम से न कही जाने वाली बात भी प्रशस्त रूप से प्रस्तुत की जा सकती है।
6. सूक्तियाँ व्यक्ति के आचार-विचार पर गहरा प्रभाव डालने का सुनियोजित कार्य करती हैं।

7. सूक्तियाँ संक्षिप्त होने के कारण से कम शब्दों में अधिक बात कहने में समर्थ होती है। इसकारण कम समय में समझाने हेतु सूक्तियाँ रची जाती है।
8. सूक्तियों के माध्यम से समाज में व्याप्त नैतिक आचरण, चारित्रिक उत्थान, सामाजिक सुधार किया जा सकता है।
9. सूक्तियों के द्वारा बिना द्वेष के भी अपनी कठोर बात सहजता एवं उपहास के साथ प्रकट की जा सकती है।
10. सूक्तियों से सामाजिक न्याय व्यवस्था का संचालन भी सहजता से किया जा सकता है।
11. सूक्तियों का प्रयोग लोक व्यवहार में अधिक होने से उन्हें समझने के लिये विद्वता की आवश्यकता नहीं होने से सामान्यजन भी सूक्तियों का कथन सहजता से समझ सकते हैं।
12. सूक्तियों से भूतकाल की परम्पराओं का ज्ञान किया जा सकता है।
13. सूक्तियों भविष्य के नवीन समाज में आदर्श प्रस्तुत करने के लिये दर्पणवत् होती है।

उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति सूक्तियों के अध्ययन से की जा सकती है।

सत्यार्थनीति की सूक्तियों का प्रभाव-

सूक्तियाँ महाकाव्यों, खण्डकाव्यों आदि काव्य की विधाओं में अथवा नाट्यशास्त्र एवं गद्यविधा में पायी जाने वाली समाज की शिक्षाप्रद उक्तियाँ हैं। यह नीति सम्बन्धी मनोरंजन प्रिय एवं शिक्षाप्रद होने के साथ जीवन में परिवर्तन का महत्त्वपूर्ण कार्य भी करती हैं।

'सत्यार्थनीतिः' श्रुतसंवेगी महाश्रमण मुनिश्री आदित्यसागर जी महाराज द्वारा रचित शिक्षाप्रद सूक्ति ग्रन्थ है। ग्रन्थ स्वनाम को सार्थक करने वाला है। सत्य के अर्थ को बताने वाली नीतियों का भण्डार है। इसमें 400 सूक्तियों के द्वारा समाज को एवं पाठक को उसके व्यक्तित्व के विकास के लिये शिक्षा दी गई है। उनमे से कुछ सूक्तियाँ अत्यन्त प्रभावशाली एवं जीवन की दशा को दिशा प्रदान करने में सहायक हैं।

सत्यार्थ-नीतिः

1. लोभी कदाप्युपकारी न भवति (सूक्ति-58) - लोभी कभी उपकारी नहीं होता। उपकार स्वार्थ रहित किया जाता है। लोभ से स्वार्थ ही सिद्ध होता है। लोभ त्याग किये बिना निःस्वार्थ भावना जागृत होना असंभव है। इस कारण यह सूक्ति शिक्षा देती है कि लोभी व्यक्ति से उपकार की अपेक्षा कभी भी नहीं रखनी चाहिये।

2. यत्राज्ञानं वरदानं, तत्र बुद्धिप्रदर्शनं मूर्खता (सूक्ति-63) - जहाँ अज्ञान ही वरदान है, वहाँ बुद्धि का प्रदर्शन करना मूर्खता है। बुद्धि सदैव जीवन की रक्षा करती है, परन्तु उस बुद्धि का सदुपयोग करना कला है। जो बुद्धि का प्रयोग बिना विचार किये कही भी करते हैं, वे हानि के पात्र होते हैं। इसकारण आवश्यकतानुसार ही बुद्धि का प्रयोग करना चाहिये। जहाँ बुद्धि की आवश्यकता नहीं वहाँ मौन रहना श्रेयस्कर है।

3. उचितसमये कृतश्रमो हि भवति सफलः (सूक्ति-64) - उचित समय में किया गया श्रम सफल होता है- समय की अपनी महत्ता है। समय के साथ चलने वाला ही सफलता को पाता है। जिसने समय के साथ परिश्रम किया, वह सफल है। समय के निकल जाने पर असफलता ही हाथ लगती है। अतः समय का मूल्य समझना चाहिये और समयानुसार परिश्रम पर ध्यान देना चाहिये।

4. आत्मविश्वासः सफलायाः प्रथमरहस्यम् (सूक्ति 68)- आत्मविश्वास सफलता का प्रथम रहस्य है। जिसमें आत्मविश्वास नहीं, वह जीतते हुये भी हार जाता है। युद्ध में वह शत्रु प्रचण्ड होता है, जिसका आत्मविश्वास प्रबल है, सेना बड़ी होने पर भी आत्मविश्वास कमजोर है, तो हार निश्चित है। आज की परिस्थितियों में वैभव सम्पन्न बुद्धिमान व्यक्ति आत्मविश्वास से कमजोर होने पर सफलता प्राप्त नहीं कर पाता। अतः आत्मविश्वास यानी स्वयं पर विजय प्राप्त करना है। स्वयं के विजेता होने पर दूसरों के विजेता होना संभव है।

इसी प्रकार की प्रत्येक सूक्ति नीति से सम्बन्धी शिक्षा का प्रसार-प्रचार करती है। जो मनन करने योग्य है।

सर्वप्रथम श्रुतसंवेगी मुनिश्री आदित्य सागर महाराज के चरणों

में प्रणति निवेदित करते हुये आभार व्यक्त करता हूँ। जिन्होंने **सत्यार्थनीतिः** जैसे महत्त्वपूर्ण नीति ग्रन्थ का सम्पादन करने का गुरुतर दायित्व मुझे दिया। मुनिश्री की भावना इस महत्त्वपूर्ण कृति को पाठकों के हाथों में शीघ्र पहुँचाने की है। मुनिश्री की भावना के अनुरूप कार्य करते हुये, मुझे इस कृति में अपने जीवन से सम्बन्धित कुछ नीतियों का ज्ञान हुआ और भूतकाल में हुई कुछ त्रुटियों का सुधार करने का मानस बनाया। **इन सूक्तियों के पढ़ने संशोधित करने तथा सम्पादित करने पर मुनिश्री के अगाध एवं गहनज्ञान का अनुभव भी हुआ। अल्प दीक्षा काल में मुनिश्री द्वारा रहस्यमय ग्रन्थों का सृजन पूर्वभव के ज्ञान के प्रादुर्भाव सा प्रतीत होता है। मुनिश्री श्रुतज्ञान के प्रति अगाढ श्रद्धा एवं लगाव अविस्मरणीय है। अहर्निश ज्ञानाराधना में संलग्न रहना अपने से जुड़े भक्तों को सन्मार्ग का पथप्रदर्शन करना वास्तव में मोक्षमार्गी का स्वरूप प्रतीत होता है।**

मुनिश्री का प्रथम बार दर्शन होना तथा इस कृति का गुरुतर भार सौंपना मुनिश्री का करुणामयी आशीष ही है, जिससे यह कृति शीघ्रता से सम्पन्न हो सकी। साथ ही **संघस्थ श्रुतप्रिय श्रमणरत्न मुनिश्री अप्रमितसागर महाराज जी** को भी प्रणति पूर्वक नमोऽस्तु निवेदन करता हूँ, जिनका वात्सल्यमयी आशीष फलित हुआ, **सहजानन्दी श्रमणरत्न मुनिश्री सहजसागर महाराज जी** जिनकी सहजता ही कार्य की प्रगति में साधक बनी मैं उन्हें भी नमोऽस्तु निवेदित करता हूँ। **संघस्थ क्षुल्लक श्री श्रेयससागर जी महाराज** के चरणों में इच्छामि निवेदित करता हूँ। साथ ही मुनित्रय से आशा करता हूँ कि मुनिश्रय इस प्रकार मुझ पर अपना आशीष बनाए रखें।

गुरुपदचञ्चरीक
डॉ. सतेन्द्र कुमार जैन, जयपुर
97167-63302

श्रुतसंवेगी-महाश्रमण-आदित्यसागरप्रणीता

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-1

(मन विजय का मंत्र)

● **सेवा-प्रशंसाहारात्परचित्तविजयः।**

सेवा, प्रशंसा और आहार से दूसरे के मन को जीता जाता है।

नीति-2

(वक्ता का लक्षण)

● **किञ्चित्स्वप्रशंसा श्रेष्ठवक्तृलक्षणम्।**

किंचित् स्वात्म प्रशंसा श्रेष्ठ वक्ता का लक्षण है।

नीति-3

(सम्यक्त्व का महत्त्व)

● **सम्यक्त्वेन क्रियमानसाधना फलवती भवति।**

सम्यक्त्व के साथ अर्थात् सम्यग्दर्शन के साथ की जाने वाली साधना ही फलवती होती है।

नीति-4

(स्वोपकार)

● **अन्यस्योपकारः स्वोपकार एव।**

अन्य का उपकार करना स्व का उपकार ही है।

नीति-5

(पुण्यबल की प्रधानता)

● **सर्वबलेषु बलवान् पुण्यबलम्।**

सभी बलों में बलवान पुण्यबल है।

नीति- 6

(बुद्धिमान किसका सहयोग नहीं लेते)

● **महाकार्येष्वपुण्यसहयोगो न गृह्णाति प्रज्ञः।**

प्रज्ञ पुरुष महान् कार्यों में पुण्यहीन पुरुष का सहयोग कभी नहीं लेते।

नीति-7

(उपवास का लक्षण)

● **कषायरहितलङ्घनमुपवासम्।**

जो कषाय शून्य लङ्घन है, वही उपवास है।

नीति-8

(स्त्रीपर्याय कैसी है?)

● **निन्दनीयः स्त्रीपर्यायः।**

स्त्रीपर्याय निन्दनीय है।

नीति-9

(धर्म की प्रधानता)

● **धर्मः पुरुषप्रधानः।**

धर्म पुरुषप्रधान है।

नीति-10

(निर्वाण का बीज)

● **अर्हद्भक्तिर्निर्वाणबीजम्।**

अरिहंत प्रभु की भक्ति का बीज निर्वाण है।

नीति-11

(स्वाध्याय का लक्षण)

● **स्वसमयस्याध्ययनं स्वाध्यायः।**

स्वसमय का अध्ययन ही स्वाध्याय है।

नीति-12

(स्वभाव का लक्षण)

● **अभावो विभावस्य खलु स्वभावः।**

विभावों का अभाव होना ही स्वभाव है।

नीति-13

(अज्ञानी का लक्षण)

● **गुरुमध्ये स्वज्ञानप्रकाशमज्ञानी करोति।**

अज्ञानी ही गुरु के बीच में अपने ज्ञान को प्रकाशित करता है।

नीति-14

(यश किसका अनुगामी है?)

● **पुण्यानुगामी यशः।**

यश/कीर्ति पुण्य की अनुगामी है।

नीति-15

(शत्रु-मित्र की पहचान)

● **पुण्ये सर्व-मित्राण्यपुण्ये सर्व-शत्रवः।**

पुण्योदय के काल में सभी मित्र होते हैं और पापोदय के काल में सभी शत्रु हो जाते हैं।

नीति-16

(आत्मविनाश क्या है ?)

● **तत्त्वविपर्यास आत्मविनाशः।**

तत्त्व का विपर्यास होना, आत्मा का विनाश होना है।

नीति-17

(निजात्मघाती कौन है ?)

● **गुरुविद्रोही निजात्मघाती।**

गुरु का विद्रोह करने वाले निजात्मा का घात करने वाले हैं।

नीति-18

(दुर्जन संगति से हानि)

● **दुर्जनस्य संसर्गेण सज्जनोऽपि जायते दुर्जनः।**

दुर्जन के संसर्ग से सज्जन भी दुर्जन हो जाते हैं।

नीति-19

(मौन की श्रेष्ठता)

● **अज्ञानीमध्ये मौनं वरम्।**

अज्ञानी जीवों के मध्य में मौन रहना श्रेष्ठ है।

नीति-20

(दुर्लभता)

● **शुद्धभोजनं विशुद्धभावः सुदुर्लभः।**

शुद्धभोजन और विशुद्धभाव बहुत दुर्लभता से प्राप्त होते हैं।

नीति-21

(हृदय का द्वार)

● **सामान्यतो हृदयमार्ग-प्रवेश उदरात्।**

सामान्यतः सभी जीवों के दिल का मार्ग उदर से ही जाता है। अर्थात् पेट से होकर दिल का रास्ता जाता है।

नीति-22

(पुण्यानुमोदना का अधिकारी)

● **पुण्यजीवो हि प्रशस्तकार्यस्यानुमोदनं करोति।**

प्रशस्त कार्यों की अनुमोदना पुण्यजीव ही कर पाते हैं।

नीति-23

(गुरुकृपा)

● **दुर्लभकार्यमपि सुलभो गुरुप्रसादात्।**

दुर्लभ से दुर्लभ कार्य भी गुरु के प्रसाद से सुलभ हो जाते हैं।

नीति-24

(मित्र कौन है ?)

● **निखिलजगत्पुण्यस्य मित्रम्।**

सम्पूर्ण लोक पुण्य का ही मित्र है।

नीति-25

(दुर्जनों की दूरी से लाभ)

● **स्वरक्षणविकासार्थञ्च पृथक्त्वं कुरु दुर्जनात्।**

निज की रक्षा और निज के विकास के लिये दुर्जनों से दूरी करो।

नीति-26

(प्रश्नोत्तर की पहचान)

● **येषु शब्देषु प्रश्नस्तेषु शब्देषूत्तरः।**

जिन शब्दों में प्रश्न हो, उन्हीं शब्दों में उत्तर होना चाहिये।

नीति-27

(गुणवृद्धि की आवश्यकता)

● **अन्याकर्षितार्थं कुरु गुणवृद्धिम्।**

अन्य जीवों को आकर्षित करने के लिये अपने गुणों की वृद्धि करना चाहिये।

नीति-28

(शब्दों का प्रयोग)

● **विचारतः कुरु शब्दप्रयोगम्।**

शब्द का प्रयोग विचार पूर्वक ही करो।

नीति-29

(गूढवचनों का कथन किससे ?)

● **स्वगूढवचनं केवलं स्वगुरवे वद।**

अपने गूढ़वचनों को केवल अपने गुरु से ही कहो।

नीति-30

(परोपकार कैसे करें ?)

● **स्वरक्षां कुर्वन् परोपकारं कुरु।**

अपनी रक्षा करते हुये ही परोपकार करो।

नीति-31

(किसे नहीं भूलना चाहिये ?)

● **ये दुःखेषु सहायकास्तान् सुखेषु मा विस्मर।**

जो दुःखों के दिनों में सहायक हों, उन्हें सुख के दिनों में मत भूलो।

नीति-32

(समय का उपयोग)

● **यथासमयं परिवर्तनं कुर्यात् तु बुद्ध्या।**

समय के अनुसार परिवर्तन करें, मगर बुद्धि से।

नीति-33

(सज्जन का स्वभाव)

● **पतितसहायकः केवलं सज्जनः।**

मात्र सज्जन ही पतितजनों के सहायक होते हैं।

नीति-34

(मधुरवचन बोलने का निर्देश)

● **इच्छा-अपूर्णे सत्यपि वद मधुरवचनम्।**

इच्छा पूरी न होने पर भी मधुर वचन ही बोलें।

नीति-35

(अपशब्द का प्रयोग)

● **अपशब्दं स्वस्मै सह, यदि गुरुजनार्थं तु वद।**

यदि अपशब्द का प्रयोग आपके लिये हो, तो सहन करें, गुरुजन के लिये हो, तो जरूर कहें।

नीति-36

(बुद्धिवर्धन का निर्देश)

● **आयु-वर्धने सति बुद्धिवर्धनमपि कुरु।**

आयु के बढ़ने पर बुद्धि का वर्धन भी करें।

नीति-37

(पर के लिये उद्यम करने का निर्देश)

● **कदा-कदा परसुखार्थमपि कुर्यादुद्यमम्।**

कभी-कभी पर के सुख के लिये भी उद्यम करना चाहिये।

नीति-38

(प्रीतिपूर्वक गुरुसेवा से पुण्यसंग्रह)

● **प्रीतेर्गुरुसेवा गुरुतर-पुण्यसंग्रहसाधनम्।**

प्रीति पूर्वक गुरुसेवा गुरुतर पुण्यसंग्रह का साधन है।

नीति-39

(सर्वकार्य सिद्धिमंत्र)

● **धैर्यं सर्वकार्यसिद्धिमन्त्रम्।**

सभी कार्यों की सिद्धि का मन्त्र धैर्य है।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-40

(शत्रुओं के लिये सुअवसर)

● **मित्राणां विवादाश्शत्रूणां सुअवसरा भवन्ति।**

मित्रों के झगड़े शत्रुओं के सुअवसर होते हैं।

नीति-41

(सुन्दरता अभिशाप कब है?)

● **सद्गुणैर्विनाभिशापः सौन्दर्यम्।**

बिना सद्गुणों के सुन्दरता अभिशाप है।

नीति-42

(जीवन का वरदान)

● **प्रसन्नता जीवनस्योत्तमं वरदानम्।**

प्रसन्नता जीवन का उत्तम वरदान है।

नीति-43

(पुण्य की मृत्यु)

● **निन्दया पुण्यं म्रियते।**

निन्दा करने से पुण्य मर जाता है।

नीति-44

(उपहास कटु है)

● **मरणादधिककटुरुपहासः।**

उपहास मृत्यु से अधिक कटु होता है।

नीति-45

(भाग्य और पुरुषार्थ)

● **भाग्येन भोजनं लभ्यते, उदरपूर्तिस्तु पुरुषार्थेन भवति।**

भोजन भाग्य से प्राप्त होता है, मगर पेट पुरुषार्थ से भरता है।

नीति-46

(क्रोध का कारण)

● **अपेक्षाया उपेक्षा हि क्रोधस्य कारणम्।**

अपेक्षा की उपेक्षा होना ही क्रोध का कारण है।

नीति-47

(अन्तिम लक्ष्य)

● **प्रत्येकलक्ष्यस्यान्तिमलक्ष्यं शान्तिसुखे च।**

प्रत्येक लक्ष्य का अन्तिमलक्ष्य शान्ति और सुख है।

नीति-48

(सफल व्यक्ति सुखी हो, आवश्यक नहीं)

● **प्रत्येकसफलजीवः प्रसन्नः सुखयुक्तो भवतु, नावश्यम्।**

प्रत्येक सफल व्यक्ति प्रसन्न और सुखी हो, आवश्यक नहीं।

नीति-49

(परिधानों का चयन)

● **प्रसङ्गानुसारेण परिधानस्य चयनमावश्यकम्।**

प्रसङ्ग के अनुसार परिधान का चयन आवश्यक है।

नीति-50

(अच्छी नीति से उन्नति)

● **यस्य नीतिः सुष्ठु, तस्योन्नतिर्भविष्यति।**

जिसकी नीति अच्छी है, उसकी उन्नति होगी।

नीति-51

(उत्तम दण्ड)

● **उत्तमदण्डो भवेऽपमानः।**

संसार में अपमान सबसे बड़ा दण्ड है।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-52

(सत्य और असत्य)

● **शान्तं सत्यं, कोलाहलमसत्यम्।**

सत्य शान्त होता है, असत्य ही शोर मचाता है।

नीति-53

(अमृत क्या है?)

● **प्रियदर्शनममृतम्।**

प्रिय व्यक्ति का दर्शन अमृत है।

नीति-54

(हानि क्या है?)

● **अवसरस्खलनं ज्येष्ठतमा हानिः।**

अवसर चूकना सबसे बड़ी हानि है।

नीति-55

(जीवन क्या है?)

● **जीवनं सन्धये सदैव विवशं करोति।**

जीवन सदैव समझौते के लिये विवश करता है।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-56

(निकटता अनावश्यक है)

● **यत्र हानिसम्भावना तत्र दूरमवश्यम्।**

जहाँ हानि की सम्भावना हो, वहाँ दूरी आवश्यक है।

नीति-57

(सद्व्यवहार करणीय है)

● **अशुभकाले सत्यपि व्यवहारोऽशुभो न भवतु।**

दिन बुरे होने पर भी व्यवहार बुरा न हो।

नीति-58

(लोभ उपकारी नहीं)

● **लोभी कदाप्युपकारी न भवति।**

लोभी कभी भी उपकारी नहीं होता।

नीति-59

(सरलता ही प्रार्थना है)

● **सारल्यमेव स्वकीये प्रार्थना।**

सरलता ही अपने आप में प्रार्थना है।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-60

(सुख की कल्पना)

● **सन्तोषानासक्तिभ्यां विना वृथा सुखकल्पना।**

अनासक्ति और सन्तोष के बिना सुख की कल्पना व्यर्थ है।

नीति-61

(पाप का बीज और फल)

● **ऐश्वर्यं पापबीजं, दारिद्र्यं पापफलञ्च।**

ऐश्वर्य पाप का बीज है, दरिद्रता पाप का फल है।

नीति-62

(विज्ञापन सहित दान पुण्य नहीं)

● **यस्य विज्ञापनं, तस्मिन् दाने नास्ति पुण्यम्।**

जिसका विज्ञापन हो, उस दान में कोई पुण्य नहीं है।

नीति-63

(मूर्खता क्या है)

● **यत्राज्ञानं वरदानं, तत्र बुद्धिप्रदर्शनं मूर्खता।**

जहाँ अज्ञान वरदान हो, वहाँ बुद्धि का प्रदर्शन मूर्खता है।

नीति-64

(उद्यम कब करना चाहिये)

● **उचितसमये कृतश्रमो हि भवति सफलः।**

उचित समय पर किया गया श्रम ही सफल होता है।

नीति-65

(पराजय का द्वार)

● **अहङ्कारो हि पराजयद्वारम्।**

अहङ्कार ही पराजय का द्वार है।

नीति-66

(अज्ञान शत्रु है)

● **अज्ञानमिवान्यरिपुर्नास्ति।**

अज्ञान के समान दूसरा बैरी नहीं।

नीति-67

(सफलता का रहस्य)

● **आत्मविश्वासः सफलतायाः प्रथमरहस्यम्।**

आत्मविश्वास सफलता का प्रथम रहस्य है।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-68

(आलोचक कौन ?)

● **ये प्रायोऽसफलास्ते भवन्त्यालोचकाः।**

आलोचक वे ही बनते हैं, जो प्रायः असफल रह जाते हैं।

नीति-69

(सर्वोत्तम नीति)

● **शुचिता सर्वोत्तमनीतिः।**

ईमानदारी सर्वोत्तम-नीति है।

नीति-70

(परोपदेश पाप कब ?)

● **स्वसुखार्थं परोपदेश-दानं पापम्।**

अपने सुख के लिये पर को उपदेश देना पाप है।

नीति-71

(सफलता का निमंत्रण)

● **उत्साहः सफलतामामन्त्रयते।**

उत्साह सफलता को निमन्त्रण देती है।

नीति-72

(स्वोपदेश आवश्यक)

● **स्वोन्नतये नित्यं स्वमुपदेशं देहि।**

स्वयं की उन्नति के लिये, निरन्तर स्वयं को उपदेश दो।

नीति-73

(विजय सम्भव कैसे ?)

● **एकाग्रतापुण्यैश्च कार्ये सम्भवो विजयः।**

एकाग्रता एवं पुण्यों से ही कार्य पर विजय सम्भव है।

नीति-74

(प्रथम असम्भव कार्य)

● **प्रत्येकमङ्गलकृत्यं प्रथममसम्भवं भवति।**

प्रत्येक अच्छा कार्य पहले असम्भव होता है।

नीति-75

(बड़े कार्य का आरम्भ)

● **लघुकार्यैर्विपुलकार्यमारम्भं कुर्यात्।**

बड़े कार्य छोटे कार्यों से आरम्भ करना चाहिए।

नीति-76

(अपने कार्य को स्वयं करें)

● **स्वयोग्यकार्यमन्यैर्न कारयात्।**

स्व के योग्य कार्य दूसरों से नहीं कराना चाहिये।

नीति-77

(मूर्ख और ज्ञानी में अन्तर)

● **मूढा हि कुप्यन्ते, ज्ञानिनः शाम्यन्ति।**

मूर्ख ही क्रोध करते हैं, ज्ञानी शान्त रहते हैं।

नीति-78

(वीरता की सुगन्धि)

● **प्रसिद्धिर्वीरतायाः कार्याणां सुगन्धिः।**

प्रसिद्धि वीरता के कार्यों की सुगन्धि है।

नीति-79

(अपशब्द कौन करते हैं?)

● **दुर्बला अपवदन्ति।**

कमजोर लोग गाली देते हैं।

नीति-80

(गुणवान् के लिये कार्य)

● **गुणवन्तेभ्यः किञ्चिदपि नालभ्यम्।**

गुणवानों के लिये कुछ भी अलभ्य नहीं है।

नीति-81

(गुणग्रहण और दोषमोचन)

● **शत्रोर्गुणग्रहणं कुरु, गुरोर्दुर्गुणं मुञ्च।**

शत्रु के गुण ग्रहण करो, गुरु के दुर्गुण छोड़ दो।

नीति-82

(हृदय का पागलपन)

● **घृणा हृदयस्योन्मत्तता।**

घृणा हृदय का पागलपन है।

नीति-83

(कर्म आवश्यक है)

● **जीवनस्यानन्दार्थमावश्यकं कर्म।**

जीवन के आनन्द के लिये कर्म करना आवश्यक है।

नीति-84

(भूखा कौन नहीं रहता ?)

● **यस्य हस्ते कला, स कदापि बुभुक्षितो न निवसति।**

जिसके हाथ में कला है, वह कभी भूखा नहीं रहता।

नीति-85

(स्वभावगत भय, कायरता है)

● **यदा भयं स्वभावगतं, तदा तं कायरता।**

जब भय स्वभावगत होता है, तब वह कायरता कहलाता है।

नीति-86

(क्रोध से पूर्व चिन्तन)

● **क्रोधस्य पूर्वं तस्य फलचिन्तनं कुरु।**

क्रोध करने के पहले उसके फल का चिन्तन करो।

नीति-87

(मौन उत्तम है)

● **क्रोधस्योत्तमोपचारो मौनम्।**

क्रोध का सर्वश्रेष्ठ उपचार मौन है।

नीति-88

(क्रोध क्या है ?)

● **अन्यदोषाणां स्वस्मात् प्रतिकारः कोपः।**

दूसरों की गलतियों का स्वयं बदला लेना क्रोध है।

नीति-89

(कीर्ति का नाश, जीवन का नाश)

● **यस्य कीर्तिविनाशस्तस्य जीवनविनाशोऽस्ति।**

जिसकी कीर्ति नष्ट हो जाती है, उसका जीवन नष्ट हो जाता है।

नीति-90

(आलोचना एवं निर्दोषता)

● **आलोचना सरला, निर्दोषता कठिना।**

आलोचना करना सरल है, निर्दोष रहना कठिन है।

नीति-91

(असत्यभाषण से हानि)

● **मृषाभाषी मित्रं पुण्यञ्च यशो न लभते।**

झूठ बोलने वाले को न मित्र, न पुण्य और न यश मिलता है।

नीति-92

(तृष्णा की अतृप्ति)

● **प्रियवस्तुप्राप्ते सत्यपि तृष्णा न भवति तृप्ता।**

प्रिय वस्तु प्राप्त होने पर भी तृष्णा तृप्त नहीं होती।

नीति-93

(सर्वश्रेष्ठ दान)

● **संसारस्य सर्वश्रेष्ठदानं क्षमाज्ञानदानञ्चेति।**

संसार का सर्वश्रेष्ठ दान क्षमादान और ज्ञानदान है।

नीति-94

(सुख की निकटता)

● **यदा दुःखं स्वकीयचरमसीमायां, तदा सुखं निकटं भवति।**

जब दुःख अपनी चरम सीमा पर होता है, तब सुख निकट होता है।

नीति-95

(हृदय का गुण)

● **हृदयगुणो दानशीलता, न तु हस्तगुणः।**

दानशीलता हृदय का गुण है, न कि हाथों का गुण है।

नीति-96

(दुःख से रक्षण के उपाय)

● **दुःखेभ्यो रक्षणार्थं, मुञ्च चिन्तां कुरु चिन्तनम्।**

दुःखों से बचने के लिये चिन्ता छोड़ो और चिन्तन करो।

नीति-97

(सुख का मूल्य)

● **दुःखभोगात् सुख-मूल्यस्य ज्ञानं भवति।**

दुःख भोगने से सुख के मूल्य का ज्ञान होता है।

नीति-98

(दुष्टों को वश में करने के उपाय)

● **दुष्टा भयं दर्शयित्वा वशे भवन्ति, न तु क्षमाम्।**

दुष्ट लोग भय दिखाकर वश में किये जाते हैं, क्षमा दिखाकर नहीं।

नीति-99

(उत्तम सुखी)

● **यस्य गृहे शान्तिर्स हि सर्वोत्कृष्टसुखी।**

सबसे सुखी वही है, जिसके घर में शान्ति है।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-100

(जीवन क्या है ?)

● **स्वत्रुटिभिर्संग्रामो जीवनम्।**

स्वयं की भूलों से संग्राम करना जीवन है।

नीति-101

(मरण के पश्चात् जीवित कौन ?)

● **निस्स्वार्थसेवा, मरणोपरान्तमपि जीवितं करोति।**

निस्स्वार्थ सेवा, मरने के बाद भी जीवित रखती है।

नीति-102

(दुर्भाग्य की गति)

● **अश्वे दुर्भाग्यमारुह्यागच्छतीति, पादाभ्यां गच्छति।**

दुर्भाग्य घोड़े पर सवार होकर आता है और पैदल-पैदल जाता है।

नीति-103

(दुर्जनों का कार्य)

● **दुर्जनाः कुर्वन्ति सज्जननिन्दाम्।**

सज्जनों की निन्दा दुर्जन ही करते हैं।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-104

(दुर्भाग्यशाली का कार्य)

● **दुर्भाग्यशाली प्राप्तवस्त्ववहेलनां करोति।**

दुर्भाग्यशाली प्राप्त वस्तु की अवहेलना करता है।

नीति-105

(व्यर्थ कार्य)

● **स्वदोषान् परीक्षणमन्तरेणान्येषु दोषारोपणं वृथेव।**

अपने दोषों को परखे बिना दूसरों पर दोष लगाना व्यर्थ है।

नीति-106

(धन से तृप्ति नहीं)

● **धनाद्धनेच्छा वर्धते, नैव तृप्यते।**

धन से धन की इच्छा बढ़ती है, तृप्ति नहीं होती।

नीति-107

(धैर्य का फल)

● **धैर्यं कटुकं, तस्य फलं तु मधुरं भवति।**

धैर्य कड़वा होता है, पर उसका फल मीठा होता है।

नीति-108

(सज्जनों की सम्पत्ति)

● **सज्जनानां सम्पत्तिर्धैर्यम्।**

सज्जनों की सम्पत्ति धैर्य है।

नीति-109

(मानव के आभूषण)

● **नम्रतामधुरवचनानि च मानवभूषणाणि।**

नम्रता और मधुर वचन ही मनुष्य के आभूषण हैं।

नीति-110

(जीव ज्ञानी कब होता है?)

● **दुःखहानि-सहनस्य पश्चाद् जीवो भवत्यधिकनम्रज्ञानी च।**

दुःख और हानि सहने के बाद व्यक्ति अधिक
नम्र और ज्ञानी हो जाता है।

नीति-111

(ठगी का परिणाम)

● **प्रवञ्चनाफलं दुःखदुर्गती च।**

प्रवञ्चना का परिणाम दुःख और दुर्गति है।

नीति-112

(विनम्र पुरुषों के लाभ)

● **विनम्रपुरुषा विद्याकलाफलानि च लभन्ते।**

विनम्र लोग ही विद्या और कला के फलों को प्राप्त कर पाते हैं।

नीति-113

(पुरुष-स्त्री में अन्तर)

● **पुरुषजीवनं संघर्षेण स्त्रीजीवनमात्मसमर्पणेणारभ्यते।**

पुरुष का जीवन संघर्ष से आरम्भ होता है और स्त्री का आत्मसमर्पण से।

नीति-114

(पुरुष-स्त्री के गुण)

● **पुरुषगुणो गम्भीरता स्त्रीगुण उत्साहः।**

पुरुषों का गुण गम्भीरता है और स्त्रियों का गुण उत्साह है।

नीति-115

(धर्म और अधर्म का लक्षण)

● **परोपकार इव कोऽपि धर्मो नास्ति, परपीडेव कोऽप्यधर्मो नास्ति।**

परोपकार के समान कोई धर्म नहीं, पर पीड़ा के समान कोई अधर्म नहीं।

नीति-116

(कार्य की सिद्धि)

● **दुर्गमपरिश्रमोद्योगैर्कार्यसिद्धिर्भवति।**

उद्योग और कठिन परिश्रम से ही कार्य की सिद्धि होती है।

नीति-117

(सौभाग्य का वास)

● **सौभाग्यं सदा परिश्रमेण सह वसति।**

सौभाग्य हमेशा परिश्रम के साथ वास करता है।

नीति-118

(सफलता का सूत्र)

● **सफलतासूत्रमेकशब्दे परिश्रमः परिश्रमः परिश्रमः।**

एक शब्द में सफलता का सूत्र- परिश्रम परिश्रम परिश्रम है।

नीति-119

(प्रतिभा की शुद्धता)

● **प्रतिभावतः प्रतिभा घोरपरिश्रमेण शुध्यति।**

प्रतिभाशाली की प्रतिभा घोर परिश्रम से निखरती है।

नीति-120

(पुरुष की सम्पदा)

● **उत्तमकलत्रस्वास्थ्यञ्च पुरुषस्य सर्वोत्तमसम्पदा।**

उत्तम पत्नी और उत्तम स्वास्थ्य पुरुष की सर्वोत्तम सम्पदा है।

नीति-121

(पुरुष-स्त्री का बल)

● **रोदनं स्त्रीबलं धैर्यं पुरुषबलञ्च।**

स्त्री का बल रोना है और पुरुष का बल धैर्य है।

नीति-122

(आपत्ति काल में परीक्षा)

● **आपदकाले धैर्य-धर्म-मित्र-स्त्रीणाञ्च परीक्षा भवति।**

आपद काल में धैर्य, धर्म, मित्र और नारी की परीक्षा होती है।

नीति-123

(पूज्यनीय कौन?)

● **पूज्यनीया गुणा न तु जातिः।**

पूज्यनीय गुण हैं, न कि जाति।

नीति-124

(दुःख का कारण)

● **पापमसुखकारणम्।**

पाप दुःख का कारण है।

नीति-125

(पापों में सुख नहीं)

● **पापेषु सुखकल्पनाऽज्ञानम्।**

पापों में सुख की कल्पना अज्ञान है।

नीति-126

(विद्वानों का स्वभाव)

● **जिज्ञासापूर्तिर्संदेहनिवारणञ्चैव सर्वपण्डितस्वभावः।**

जिज्ञासा की पूर्ति और संदेह का निवारण ही सभी विद्वानों का स्वभाव होता है।

नीति-127

(स्त्रियों का दुःख)

● **स्त्रियै सपत्नीत्वाद् विपुलदुःखं नास्ति।**

स्त्री के लिये सपत्नीत्व से बड़ा कोई दुःख नहीं है।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-128

(जैनमत की प्रसिद्धि)

● **जैनमतं सकलसत्त्वहितं प्रतीतम्।**

जैनमत समस्त प्राणियों के हित करने वाले के रूप में प्रसिद्ध है।

नीति-129

(परस्त्रीगमन से हानि)

● **परदारगमनमुभयत्र विरुद्धम्।**

परस्त्री गमन उभयलोक में विरुद्ध है।

नीति-130

(परमागम की लक्षण)

● **परमागमः स्याद्वादवाक्यसन्दर्भः।**

जो स्याद्वाद वाक्यों से सन्दर्भित हो, वही परमागम है।

नीति-131

(क्रोध पागलपन है)

● **कोपः क्षणिकोन्मत्तता।**

क्रोध क्षणिक पागलपन है।

नीति-132

(जीवन का लक्ष्य)

● **यशरक्षा जीवनस्य लक्ष्यम् ।**

यश की रक्षा जीवन का लक्ष्य होना चाहिये।

नीति-133

(चिन्ता क्या है ?)

● **नूनं चिन्ता रोगः शत्रुः कायरता चैव।**

चिन्ता ही रोग है, शत्रु है और कायरता है।

नीति-134

(जीवन का रहस्य)

● **अनुभवेन शिक्षाप्राप्तौ जीवनरहस्यं, न तु भोगेषु।**

जीवन का रहस्य भोगों में नहीं, अपितु अनुभव के द्वारा शिक्षा प्राप्ति में है।

नीति-135

(निर्धनता)

● **निर्धनत्वं मानवं दुःखित-निर्बलञ्च करोति।**

निर्धनता मनुष्य को निर्बल और दुःखी करती है।

नीति-136

(निर्धन कौन?)

● **यस्याकाङ्क्षा विपुला, स निर्धनः।**

निर्धन वह है, जिसकी आकांक्षा अधिक है।

नीति-137

(निन्दक की मनोवृत्ति)

● **निन्दक-निन्दनीयानां भवति निकृष्ट मनोवृत्तिः।**

निन्दक और निन्दनीय दोनों की निकृष्ट मनोवृत्ति होती है।

नीति-138

(कृत उद्यम ही भाग्य है)

● **कृतोद्यमो हि भाग्यानुसरणं भवति।**

किया हुआ पुरुषार्थ ही भाग्य का अनुसरण करता है।

नीति-139

(मानव की आकांक्षा)

● **प्रत्येकमानवः प्रशंसाकाङ्क्षां करोति।**

प्रत्येक मनुष्य प्रशंसा की चाह रखता है।

नीति-140

(चिन्ता से लाभ)

● **व्यक्तिवस्तुचिन्तया किल तानि बहुकालपर्यन्तं भवन्ति स्थितानि।**

लोगों और वस्तुओं की चिन्ता से ही, वे लम्बे समय तक टिकते हैं।

नीति-141

(मूल्यवान आभूषण कौन?)

● **चारित्रमेव सर्वमूल्यवन्ताभूषणम्।**

चारित्र ही सर्व मूल्यवान् आभूषण है।

नीति-142

(कौन बोध को प्राप्त नहीं होता?)

● **आसक्तं कोऽपि न प्रतिबोधयति।।**

आसक्त पुरुष को कोई नहीं समझा सकता है।

नीति-143

(मृत कौन?)

● **यस्य चित्ते धर्मवासो नास्ति, स मृत इव।**

जिसके चित्त में धर्म का वास नहीं है, वह मृत तुल्य है।

नीति-144

(स्त्री को कौन नहीं जानते ?)

● **पुरुषः पण्डितधनिकानुभवप्राप्ते सत्यपि स्त्रीमवगमनेऽसमर्थः।**
पुरुष विद्वान्, अनुभवी, धनवान होने पर भी स्त्री को समझने में असमर्थ रहता है।

नीति-145

(स्त्री वरदान और अभिशाप)

● **स्त्री पुरुषायोत्तम-वरदानमभिशापोऽप्यस्ति।**
स्त्री पुरुष के लिये सबसे बड़ा वरदान भी है और अभिशाप भी है।

नीति-146

(आशा और निराशा)

● **निराशा सम्भवमसम्भवमेवमाशाऽसम्भवं सम्भवं करोति।**
निराशा सम्भव को असम्भव और आशा असम्भव को सम्भव कर देती है।

नीति-147

(मनुष्य का कर्तव्य)

● **निर्विकारो भूत्वा स्वकार्यकरणं नृकर्तव्यम्।**
निर्विकार होकर अपना काम करना मनुष्य का कर्तव्य है।

नीति-148

(मानव, मानव क्यों नहीं ?)

● **यस्य चित्ते नास्त्युपकारवृत्तिर्स मानवो भूत्वाऽपि मानवो नास्ति।**

जिसके अन्दर उपकार वृत्ति नहीं, वह मानव होकर भी मानव नहीं।

नीति-149

(मन का प्रेम)

● **प्रेम मनसा पश्यति न तु नेत्राभ्याम्।**

प्रेम आँखों से नहीं, मन से देखता है।

नीति-150

(मानव कौशल और प्रतिभा)

● **कौशलं मानववशे, मानवः प्रतिभावशे च।**

कौशल मानव के वश में रहता है, मानव प्रतिभा के वश में रहता है।

नीति-151

(प्रतिभा व्यक्तिगत है)

● **प्रतिभालाभो व्यक्तिगतोऽस्ति, न तु जातिगतः।**

प्रतिभा की प्राप्ति जातिगत नहीं, व्यक्तिगत है।

नीति-153

(स्वयं के लिये करणीय कार्य)

● **यदन्येभ्यः कठिनं, तत्स्वयं करणं प्रतिभा।**

जो दूसरों के लिये कठिन हो, उसे स्वयं करना यही प्रतिभा है।

नीति-153

(प्रतिभा का लक्षण)

● **प्रेरणा-पुण्य-परिश्रमाणामेकत्वञ्च प्रतिभा।**

प्रेरणा, पुण्य और परिश्रम की एकता ही प्रतिभा है।

नीति-154

(जीवन-परीक्षा का फल—आत्मविश्वास)

● **जीवनपरीक्षायां ते खलूत्तीर्णा, येषु स्वात्मविश्वासोऽस्ति।**

जीवन की परीक्षा में वे ही उत्तीर्ण होते हैं, जिनमें आत्मवि

श्वास होता है।

नीति-155

(ग्रन्थ और निर्ग्रन्थ की मूल्यता)

● **निर्ग्रन्थर्ग्रन्था रत्नेभ्योऽधिकमूल्यवन्तः।**

ग्रन्थ और निर्ग्रन्थ रत्नों से अधिक मूल्यवान होते हैं।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-156

(मानव को कौन फल देता है?)

● **भाग्यकालपुरुषार्थाः संयुक्ता भूत्वा मानवं फलं ददति।**

भाग्य, काल और पुरुषार्थ तीनों संयुक्त होकर मनुष्य को फल देते हैं।

नीति-157

(मित्र कौन?)

● **ग्रन्थपुस्तकानि चैवोत्तम-मित्राणि।**

ग्रन्थ और पुस्तकें ही सर्वश्रेष्ठ मित्र हैं।

नीति-158

(परगुण ग्रहण उत्तम)

● **परप्रशंसापेक्षया परगुणग्रहणं कुरु।**

परप्रशंसा की अपेक्षा, पर के गुणों को ग्रहण करें।

नीति-159

(दुःख दूर करने का उपाय)

● **चित्तप्रसन्नात् मानवस्य सर्वदुःखानि नश्यन्ति।**

चित्त प्रसन्न रहने से मनुष्य के सारे दुःख दूर हो जाते हैं।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-160

(पवित्र हृदय की प्रार्थना)

● **पवित्रहृदयात् कृतप्रार्थना सार्थका भवति।**

पवित्र हृदय से की गई प्रार्थना कभी व्यर्थ नहीं जाती।

नीति-161

(सत्यार्थ प्रार्थना क्या है ?)

● **स्वदुर्गुणचिन्तनं प्रभूपकारस्मरणञ्चैव सत्यार्थप्रार्थना।**

अपने दुर्गुणों का चिन्तन और परमात्मा के उपकारों का स्मरण ही सत्यार्थ प्रार्थना है।

नीति-162

(क्या आवश्यक नहीं ?)

● **सर्वेषां शृणु, किन्तु निर्णय-करणं नावश्यम्।**

सबकी बातें सुनें, परन्तु निर्णय करना आवश्यक नहीं है।

नीति-163

(ज्ञान का महत्त्व)

● **भयस्यौषधं धैर्यस्य जनकं ज्ञानम्।**

ज्ञान भय की औषधि है और धैर्य का जनक है।

नीति-164

(लज्जा कहाँ नहीं)

● **आहारव्यवहारयोर्लज्जां न कुर्यात्।**

आहार और व्यवहार में लज्जा नहीं करनी चाहिये।

नीति-165

(रहस्य का उद्घाटन)

● **किमपि नेतद्रहस्यं यस्योद्घाटनं नास्ति।**

कोई भी ऐसा रहस्य नहीं, जिसका उद्घाटन नहीं होता।

नीति-166

(यौवन का लक्ष्य)

● **यौवनं विकार-विजयार्थं, न तु विकारार्थम्।**

यौवन विकारों को जीतने के लिये है, विकारों के लिये नहीं।

नीति-167

(लक्ष्मी किसे नहीं चाहती)

● **लक्ष्मीरकर्मण्य-भाग्यवादी-कायरा न समेहते।**

लक्ष्मी आलसी, भाग्यवादी और असाहसी को नहीं चाहती।

नीति-168

(धन की श्रेष्ठता)

● **धनस्य गृहे सद्भावो वरो, बुद्धौ सद्भावोऽवरो।**

धन का घर में होना श्रेष्ठ है, मगर दिमाग में होना श्रेष्ठ नहीं है।

नीति-169

(लक्ष्य प्राप्ति)

● **उत्तिष्ठ प्रबुध्यस्व तावन् मा रुन्धि यावल्लक्ष्यं न लभस्व।**

उठो, जागो, तब तक मत रुको जब तक लक्ष्य न प्राप्त हो।

नीति-170

(क्रोध में क्या नहीं करें)

● **कोपावस्थामप्यपशब्दप्रयोगं न कुर्यात्।**

क्रोध की अवस्था में भी अपशब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिये।

नीति-171

(मूर्ख और बुद्धिमान)

● **बुद्धिमते संकेतः पर्याप्तो मूर्खाय सर्वग्रन्थपाठोऽपि किञ्चिन्न ददाति।**

बुद्धिमान के लिये संकेत काफी है, मूर्ख के लिये
सम्पूर्ण ग्रन्थ पाठ भी कुछ नहीं दे पाता है।

नीति-172

(भय का परिणाम)

● **अज्ञानता कातरता च भयाद् जायते।**

भय से अज्ञानता और कायरता उत्पन्न होती है।

नीति-173

(वर्तमान का आनन्द)

● **यो भविष्यान्न बिभेति, स गृह्णाति वर्तमानानन्दम्।**

जो भविष्य से नहीं डरता, वही वर्तमान का आनन्द लेता है।

नीति-174

(जीवन-मरण क्या है?)

● **कल्याणकरणं जीवनमनिष्टकरणं तु मरणम्।**

भलाई करना जीवन है, बुराई करना मृत्यु है।

नीति-175

(किसे भाग्य पर विश्वास?)

● **यं स्वपरिश्रमे विश्वासो नास्ति, स भाग्याश्रितो भवति।**

जिसको अपने परिश्रम पर विश्वास न हो, वही भाग्य के भरोसे रहता है।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-176

(भाग्यपरिवर्तन का साधन)

● **पुरुषार्थो भाग्यपरिवर्तनस्य साधनम्।**

भाग्य बदलने का साधन पुरुषार्थ है।

नीति-177

(बड़ा पाप)

● **दोषकरणं पापं, दोषगोपनं विपुलपापम्।**

गलति करना पाप है, गलति छुपाना और बड़ा पाप है।

नीति-178

(भूल और उन्नति)

● **यो दोषं न करोति, स प्रायः किञ्चिदपि न करोति।**

जो मनुष्य भूलें नहीं करता, वह प्रायः कुछ नहीं कर पाता है।

नीति-179

(दोषों का जनक)

● **एकदोषोऽपरदोषं जनयति।**

एक बुराई दूसरी बुराई को जन्म देती है।

नीति-180

(उत्तम बल)

● **पुण्यबुद्धिबलञ्च सर्वोत्कृष्टबलम्।**

पुण्यबल और बुद्धिबल सर्वश्रेष्ठबल हैं।

नीति-181

(समय)

● **समयः सकलसमस्यासमाधानम्।**

सम्पूर्ण समस्याओं का समाधान समय है।

नीति-182

(बुद्धि की चंचलता, लक्ष्य का अभाव)

● **जानीहि बुद्धिस्थिरताऽभावे लक्ष्यप्राप्त्यभावोऽपि।**

बुद्धि की स्थिरता के अभाव में लक्ष्य प्राप्ति का भी अभाव जानो।

नीति-183

(समय का मूल्य उत्तम है)

● **यो न करोति समयमूल्यं, स कदापि किमपि श्रेष्ठकार्यं न करोति।**

जो समय का मूल्य नहीं करता, वह कभी कोई महान् कार्य नहीं करता।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-184

(ज्ञानी निर्भय है)

● **ज्ञानीजनोऽसफलतया न बिभेति।**

बुद्धिमान असफलता से नहीं घबराता।

नीति-185

(मूर्खों के लिये शिक्षा)

● **शिक्षालाभस्य मुख्यसाधनं मूर्खजनाः।**

शिक्षा प्राप्ति का मुख्य साधन मूर्ख लोग हैं।

नीति-186

(मन की सम्पन्नता)

● **मानवस्य सम्पन्नता भवति मनसा, न तु धनेन।**

मानव की सम्पन्नता मन से होती है, न कि धन से।

नीति-187

(मनोवशीकरण मंत्र)

● **वैराग्याभ्यासाभ्यां चित्तवशीकरणं भवति।**

अभ्यास और वैराग्य से मन को वश में किया जा सकता है।

नीति-188

(अमनुष्य कौन?)

● **यस्मात् सर्वजना भयभीताः, स मनुष्यो मनुष्यो नास्ति।**

जिससे सब भयभीत रहते हों, वह मनुष्य मनुष्य नहीं है।

नीति-189

(मन की स्वस्थता)

● **शारीरिकरोगान् पृथक्कर्तुं मनः स्वस्थं कुरु।**

शारीरिक रोगों को दूर करने के लिये मन को स्वस्थ रखें।

नीति-190

(श्रेष्ठता का निर्माण)

● **श्रेष्ठतानिर्माणार्थं पश्य स्वावगुणान् तथा परगुणान्।**

महान् बनने के लिये अपने अवगुणों और पर के गुणों को देखो।

नीति-191

(मन की स्वच्छता उत्तम)

● **यदि मनो मलिनस्तु स्वच्छवस्त्रैर्किं प्रयोजनम् ?।**

यदि मन मलिन है, तो स्वच्छ वस्त्रों से क्या प्रयोजन?।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-192

(दोष स्वीकारने से लाभ)

● **स्वकल्याणं स्वदोषस्वीकरणेऽस्ति।**

अपनी भलाई अपनी गलती स्वीकारने में ही है।

नीति-193

(स्वयं भाग्यनिर्माता)

● **त्वं स्वयमेव स्वभाग्यनिर्माता, चान्यस्त्वकर्ता।**

आप अपने भाग्य के निर्माता स्वयं हैं, पर तो अकर्ता है।

नीति-194

(मानव का कर्तव्य और अभिशाप)

● **संघर्षो मानवकर्तव्यं, कातरत्वं मानवाभिशापः।**

संघर्ष मानव का कर्तव्य है, कायरता मानव का अभिशाप है।

नीति-195

(जीवन का लक्ष्य)

● **चित्तशान्तिरेव जीवनलक्ष्यं भवेत्।**

मन की शान्ति ही जीवन का लक्ष्य होना चाहिय॥

नीति-196

(मैत्रीपालन दुष्कर)

● **मित्रत्वं तु सरलं, मैत्रीपालनं दुष्करम्।**

मित्र बनाना सरल है, मैत्री-पालन दुष्कर है।

नीति-197

(अमानव कौन?)

● **यस्मिन् दयाधर्मशुभभाषाचारित्रात्मबलानि नास्ति, स मानवो नास्ति।**

जिसमें दया, धर्म, अच्छी भाषा, चारित्र और आत्मबल नहीं, वह मनुष्य नहीं।

नीति-198

(सच्चा मित्र)

● **सत्यार्थमित्रं हीरकादधिकामोलम्।**

सच्चामित्र हीरे से अधिक कीमती है।

नीति-199

(शत्रु का लक्षण)

● **येन तवावगुणान् गुणा भाष्यते, स मित्रं नास्ति स तु शत्रुः।**

जो आपके अवगुणों को गुण बतलाये, वह मित्र नहीं शत्रु है।

नीति-200

(स्वभाव में कटुता- अमित्रता)

● **यदि तव मित्रं नास्त्यस्य तात्पर्यं तव स्वभावो वरो नास्ति।**

यदि आपका कोई मित्र नहीं है, इसका मतलब आपका स्वभाव अच्छा नहीं है।

नीति-201

(धन मित्रता की शत्रु)

● **मित्रतायां वित्तप्रवेशे सति मित्रता शत्रुतायां परिवर्तते।**

मित्रता में धन का प्रवेश होते ही मित्रता शत्रुता में बदल जाती है।

नीति-202

(कलह शान्ति का उपाय)

● **कलहः शमनोपायो मौनम्।**

कलह को शान्त करने का उपाय मौन है।

नीति-203

(मौन की भाषा बलवान है)

● **मौनभाषा वाणीभाषापेक्षयाऽधिकबलवती।**

मौन की भाषा वाणी की भाषा की अपेक्षा अधिक बलवती होती है।

नीति-204

(यौवन का सदुपयोग)

● **यौवनस्य सदुपयोगः सद्गति-साधनम्।**

यौवन का सदुपयोग सद्गति का साधन है।

नीति-205

(सत्य का रहस्य)

● **सत्यरहस्यमवगमनार्थं द्वेषभावनां नश्येत्।**

सत्य का रहस्य समझने के लिये द्वेषभावना को मिटाना चाहिये।

नीति-206

(लज्जा का फल)

● **आकर्षणं लज्जया वर्धते।**

लज्जा से आकर्षण बढ़ता है।

नीति-207

(सफलता का मूलमंत्र)

● **सफलतायै रहस्यानि गोपयेत्।**

सफल होने के लिये रहस्यों को गोपनीय रखें।

नीति-208

(चारित्र का दर्पण)

● **चारित्रदर्पणं बहुमूल्याभूषणञ्च लज्जा।**

लज्जा चारित्र का दर्पण है, लज्जा बहुमूल्य आभूषण है।

नीति-209

(प्राणीहित में गुण अपनाये)

● **सुशीलो, धर्मात्मा, सर्वस्य मित्रं, प्राणिहितको भवः।**

सुशील, धर्मात्मा, सबके मित्र और प्राणियों के हित करने वाले बनें।

नीति-210

(मनुष्य का उद्धार)

● **मनुष्योद्धारस्तस्य मत्याऽस्ति, न तु सम्पत्त्या।**

मनुष्य का उद्धार सम्पत्ति से नहीं, उसकी मति से है।

नीति-211

(मानव जन्म का सार)

● **बुद्धिर्धैर्यञ्च मानवजन्मसारः।**

मानव जन्म का सार बुद्धि और धैर्य है।

नीति-212

(मौन श्रेष्ठ है)

● **मूर्ख-सन्मुखे मौनं वरम्।**

मूर्खों के सन्मुख मौन लेना श्रेष्ठ है।

नीति-213

(मरण सत्य है)

● **जन्म तु मृषा, सत्यं तु केवलं मरणम्।**

जन्म तो झूठ है, सत्य तो सिर्फ मृत्यु है।

नीति-214

(मौन उच्चगुण)

● **मौने सन्ति उच्चगुणा, वाचलता विनाशका।**

मौन में बड़ा गुण हैं, वाचलता विनाशक है।

नीति-215

(कायरों की मृत्यु)

● **कातरा मरणस्य पूर्वमनेकवारं म्रियन्ते।**

कातर पुरुष मृत्यु के पूर्व कई बार मरते हैं।

नीति-216

(मौन का फल)

● **मौनवृक्षे हि शान्तिफलानि फलन्ति।**

मौन के वृक्ष पर शान्ति के फल फलते हैं।

नीति-217

(लक्ष्मी सहायक है)

● **लक्ष्मीर्विवेकशीलानां सहायतां करोति।**

लक्ष्मी विवेकशील व्यक्तियों की सहायता करती है।

नीति-218

(जीवन का कार्य)

● **लक्ष्यं स्वकीयजीवनस्य कार्यं जानीहि।**

लक्ष्य को अपने जीवन का कार्य समझो।

नीति-219

(लक्ष्यहीन जीवन)

● **लक्ष्यहीन-जीवनं दुःखसंक्लेशता-जीवनम्।**

लक्ष्यहीन जीवन दुःख-संक्लेशता का जीवन है।

नीति-220

(मस्तिष्क की जिह्वा)

● **लेखनी मस्तिष्कजिह्वा।**

लेखनी मस्तिष्क की जिह्वा है।

नीति-221

(लोभ की भूख)

● **लुब्धः सर्वसंसारं लब्ध्वापि बुभुक्षितोऽस्ति।**

लोभी सारा संसार प्राप्त करके भी भूखा रहता है।

नीति-222

(कठिन परिश्रम का लाभ)

● **विकटपरिश्रमाद् विकटलक्ष्यलाभः।**

कड़े परिश्रम से बड़े लक्ष्य प्राप्त होते हैं।

नीति-223

(लोभ पाप का जनक)

● **सर्वदोषपापजनको लोभः।**

लोभ सारे दोष और पाप का जनक है।

नीति-224

(वाणी-गुण-अवगुण की परिचायक)

● **मानवस्यावगुणगुणाः तस्य वाण्या बुध्यन्ते।**

मनुष्य के अवगुण और गुण उसकी वाणी से जाने जाते हैं।

नीति-225

(प्रसन्न व्यक्ति का प्रयास)

● **प्रसन्नचित्तो जीवनाभिशापमपि वरदाने परिवर्तते।**

प्रसन्नचित्त व्यक्ति जीवन के अभिशाप को भी
वरदान में बदल सकता है।

नीति-226

(प्रशंसा से लाभ)

● **स्वप्रशंसेच्छुका अपरप्रशंसां कुर्यात्।**

स्वप्रशंसा की चाह रखने वाले दूसरों की प्रशंसा करें।

नीति-227

(प्रशंसा से लाभ)

● **उत्तमगुणानां छाया हि प्रशंसा।**

प्रशंसा अच्छे गुणों की छाया है।

नीति-228

(प्रसन्नता से लाभ)

● **प्रसन्नतापूर्वकमुत्थानितभारो लघुः प्रतिभाषते।**

प्रसन्नतापूर्वक उठाया गया बोझ हलका प्रतीत होता है।

नीति-229

(सफलता कारक कौन?)

● **प्रसन्नचित्तो नम्रश्च प्रत्येकस्थाने साफल्यं लभेते।**

प्रसन्नचित्त और नम्र व्यक्ति हर स्थान पर सफलता प्राप्त करते हैं।

नीति-230

(जीवन का आनन्द)

● **जीवने सदा प्रसीद तथा मरणात् कदापि मा बिभीहि।**

जीवन में सदा प्रसन्न रहो और मरने से कभी भयभीत मत हो।

नीति-231

(दुर्बल और दुःखी कौन?)

● **परसम्पत्तिं दृष्ट्वा चित्ते ईर्ष्याभावधारका भवन्ति दुर्बलादुःखिताश्च।**

दूसरों की सम्पत्ति देखकर मन में ईर्ष्या का भाव रखने वाले दुर्बल और दुःखी होते हैं।

नीति-232

(पण्डित भी मूर्ख कैसे ?)

● **व्यवहारबुद्धिं विना पण्डिता अपि मूर्खाः।**

व्यवहार बुद्धि के बिना पण्डित भी मूर्ख होते हैं।

नीति-233

(स्वार्थी सम्बन्ध)

● **सर्वसम्बन्धाः स्वार्थपरा अत्र कोऽपि कस्यचिदपि मित्रं नास्ति।**

सारे सम्बन्ध स्वार्थ के हैं, यहाँ कोई किसी का मित्र नहीं है।

नीति-234

(व्यवहार कुशलता)

● **ये मृत्तिकाया अपि स्वर्णनिर्माणं कुर्वन्ति, ते हि व्यवहार-कुशलाः।**

जो मिट्टी से भी सोना बनाते हैं, वे ही व्यवहार कुशल हैं।

नीति-235

(व्यवहारिक बुद्धि की श्रेष्ठता)

● **एकाव्यवहारबुद्धिर्शताव्यावहारिकबुद्धेर्वरा।**

एक व्यवहारबुद्धि सौ अव्यावहारिक बुद्धियों से अच्छी है।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-236

(वाणी का घाव)

● **कटुवचनं कथयित्वा वाण्या कृतभयावहव्रणं न पूर्यते।**

कटुवचन कहकर वाणी से किया हुआ भयानक घाव नहीं भरता।

नीति-237

(मधुरवचन एवं कटुकवचन)

● **मधुरवचनं लाभप्रदं कटुवचनं हानिप्रदञ्च।**

मधुरवचन लाभदायक है और कटुवचन हानिकारक है।

नीति-238

(सर्वश्रेष्ठ मौन)

● **सत्यप्रियवचनं भाषणञ्च श्रेष्ठं, मौनं सर्वश्रेष्ठम्।**

सत्य और प्रियवचन बोलना श्रेष्ठ है, मौन रहना सर्वश्रेष्ठ है।

नीति-239

(कल्पनाशक्ति नाशक)

● **चिन्त्या कल्पनाशक्तिर्नश्यते।**

चिन्ता करने से कल्पना करने की शक्ति नष्ट हो जाती है।

नीति-240

(यथाशक्य नियमानुसार चलें)

● **संसार-नियमानुरूपं तावदेव गच्छ, यावतितवोन्नतिरबाधिता।**

संसार के नियमों के अनुरूप उतना ही चलें, जितने में आपकी उन्नति बाधित न हो।

नीति-241

(आदर्श जीवन)

● **आदर्शजीवनस्य निर्माणार्थमादर्शमिव स्वच्छजीवनं जीवेः।**

आदर्श जीवन के निर्माण के लिये, आदर्श (दर्पण) की तरह स्वच्छ जीवन जीना चाहिये।

नीति-242

(योजनाओं की आवश्यकता)

● **जीवने लघुगुरुयोजनासद्भावोऽनिवार्यः।**

जीवन में छोटी-बड़ी योजनाओं का होना अनिवार्य है।

नीति-243

(अवसर का लाभ)

● **उत्सुकतयावसरा जायन्ते तथा विकट-श्रमेणावसर लाभो लभ्यते।**

उत्सुकता से अवसर उत्पन्न होते हैं और कड़ी मेहनत से अवसर का लाभ प्राप्त होता है।

नीति-244

(कुसमय की तैयारी)

● **उत्तमसमयेऽनुत्तमसमयस्योद्यततां कुर्यात्।**

अच्छे समय में बुरे समय की तैयारी करना चाहिये।

नीति-245

(समय का महत्त्व)

● **समयो हि धनं महाभिषगश्च।**

समय ही धन है, समय ही महान् चिकित्सक है।

नीति-246

(सभी गुण व्यर्थ)

● **यस्मिन्न शान्तिनिवासस्तस्य सर्वगुणा वृथा।**

जिसमें शान्ति का निवास नहीं है, उसके सारे गुण व्यर्थ हैं।

नीति-247

(मन की शक्ति- बहुमूल्य)

● **सम्पत्तिस्वास्थ्याच्चाधिकमूल्यवान्मनश्शान्तिः।**

सम्पत्ति और स्वास्थ्य से अधिक मूल्यवान् मन की शान्ति है।

नीति-248

(गुण अपरिवर्तनीय)

● **धारणाः परिवर्तन्ते, गुणा न परिवर्तन्ते।**

धारणायें बदल सकती हैं, गुण नहीं बदलते।

नीति-249

(प्रतिष्ठा क्या है?)

● **दक्षतासंयमाभ्यां कृतकार्यं प्रतिष्ठां ददाति।**

दक्षता और संयम के द्वारा किया गया काम प्रतिष्ठा देता है।

नीति-250

(ज्ञानी बनने के उपाय)

● **किञ्चित् पठ, अतीवं स्मर, किञ्चिद् ब्रूहि,**
अतीवं शृणु पाण्डित्य-निर्माणस्योपायः।

थोड़ा पढ़ो, अधिक सोचो, कम बोलो, अधिक सुनो,
ज्ञानी बनने का यही उपाय है।

नीति-251

(बुद्धिमान को डर नहीं)

● **ज्ञानीजना असफलतया न बिभ्यति।**

बुद्धिमान लोग असफलता से नहीं घबराते हैं।

नीति-252

(मूर्ख और ज्ञानी)

● **मूर्खः स्वहानेरपि न शिक्षते, ज्ञानी परहानेरपि शिक्षते।**

मूर्ख अपनी हानि से भी नहीं सीखता,
ज्ञानी दूसरों की हानि से भी सीख लेता है।

नीति-253

(मीठा व्यवहार)

● **मधुरवचनादेव मधुरव्यवहारो लभते।**

मीठे बोल से ही मीठा व्यवहार मिलता है।

नीति-254

(वाणी का प्रयोग)

● **जीवस्वभावं विशदकारी तस्य वाणी, न तु तस्य रूपम्।**

व्यक्ति के स्वभाव को स्पष्ट करने वाली उसकी वाणी होती है,
उसका रूप नहीं।

नीति-255

(भाषा का सद्व्यवहार)

● **कीदृश्यपि चर्चा भवतु, भाषा तु साधु भवेत्।**

चर्चा कैसी भी हो, भाषा अच्छी ही होना चाहिये।

नीति-256

(विवाह आत्मोन्नति हेतु)

● **विवाहक्रियया स्त्रीपुरुषौ लभेते स्वात्मोन्नतिः।**

विवाह की क्रिया के कारण स्त्री और पुरुष आत्मोन्नति को प्राप्त होते हैं।

नीति-257

(मलिन पात्र और जल)

● **मलिनपात्रे विसृष्ट-स्वच्छनीरमपि मलिनं भवति।**

मैले पात्र में डाला गया स्वच्छ पानी भी मैला हो जाता है।

नीति-258

(विचारों का प्रभाव)

● **उत्तमानुत्तमं किञ्चिन्नास्ति, तव चिन्तनमेव वस्तु कुर्वन्ति उत्तमानुत्तमम्।**

अच्छा या बुरा कुछ नहीं है, आपके विचार ही वस्तु को अच्छा-बुरा बनाते हैं।

नीति-259

(दुष्ट विचारों का प्रभाव)

● **दुष्टचिन्तनानि हि मानवं दुष्टकर्माणि प्रतिनयन्ति।।**

दुष्ट विचार ही मनुष्य को दुष्ट कर्मों की ओर ले जाते हैं।

नीति-260

(बुद्धिमत्ता और मूर्खता)

● **कार्यस्य पूर्वं चिन्तनं बुद्धिमत्ता, कार्यस्य पच्छाच्चिन्तनं मूर्खता।**

काम करने के पूर्व सोचना समझदारी है, काम करने के बाद सोचना मूर्खता है।

नीति-261

(मुख्यप्रेरणा-चिन्तन)

● **चिन्तनमेवास्माकं मुख्यप्रेरणाशक्तिः।**

चिन्तन ही हमारी मुख्य प्रेरणा है।

नीति-262

(मानव का सच्चा मित्र)

● **विद्या मानवस्य भूतार्थमित्रम्।**

मानव का सच्चा साथी विद्या है।

नीति-263

(अन्धाचार)

● **चिन्तनदीपकस्य निर्वापिते सति भवत्याचारोऽन्धो।**

विचारों का दीपक बुझ जाने पर आचार अन्धा हो जाता है।

नीति-264

(अपरिवर्तनीय विचारधारा)

● **ये स्वकीयविचारधारां न परिवर्तन्ते, ते मूढा अथवा मृतका भवन्ति।**

जो अपनी विचारधारा नहीं बदलते, वो या तो मुर्दे होते हैं या फिर मूर्ख।

नीति-265

(विशाल शिक्षा)

● **विषमतया विशालशिक्षा अपरा नास्ति।**

विषमता से बड़ी कोई और शिक्षा नहीं है।

नीति-266

(बड़ा सुख कौन पाता है?)

● **यः स्वनिर्णयं विपत्तीसु न परिवर्तते, स हि विपुलसुखं लभते।**

विपत्तियों में भी जो अपना निर्णय न बदले, वही बड़ा सुख पाता है।

नीति-267

(माता-पिता बैरी कैसे?)

● **तौ मातापितरौ शत्रुसदृशौ, यौ स्वकीयसन्तानं संस्कारशिक्षाञ्च न दत्तः।**

वे माता-पिता बैरी के समान हैं, जो अपनी संतान को संस्कार और शिक्षा नहीं देते।

नीति-268

(विद्या का अन्तिम लक्ष्य)

● **विद्याचरमलक्ष्यं चारित्रनिर्माणम्।**

विद्या का अन्तिम लक्ष्य चारित्र निर्माण है।

नीति-269

(सर्वश्रेष्ठ दान एवं सम्पत्ति)

● **विद्यादानं सर्वश्रेष्ठदानं, विद्यार्जनं सर्वश्रेष्ठसम्पत्तिः।**

विद्यादान सर्वश्रेष्ठ दान है, विद्यार्जन सर्वश्रेष्ठ सम्पत्ति है।

नीति-270

(भाग्यहीन मानव का गमन)

● **यत्र भाग्यहीनो गच्छति, तत्रैव प्रायो विपत्त्यो गच्छन्ति।**

भाग्यहीन मनुष्य जहाँ जाता है, प्रायः विपत्तियाँ भी वहीं जाती हैं।

नीति-271

(क्या करो, क्या न करो?)

● **सर्वैर्प्रेम कुरु, किञ्चिद् जीवेषु विश्वासं कुरु,**
कस्यचिदप्यशुभं मा कुरु।

प्रेम सबसे करो, विश्वास कुछ पर करो, बुरा किसी का मत करो।

नीति-272

(विश्वास का महत्त्व)

● **यान् स्वस्मिन् विश्वासो विश्वमपि तेषु विश्वासो भवति।**

जिन्हें अपने आप में विश्वास हो, दुनिया को भी उन पर ही विश्वास होता है।

नीति-273

(अविश्वसनीय व्यक्ति)

● **बहुवाचकेषु जीवा बहुविश्वासं न कुर्वन्ति।**

बहुत बोलने वालों पर लोग ज्यादा विश्वास नहीं करते।

नीति-274

(सर्वशक्तिमान कौन?)

● **विश्वासः सर्वशक्तिमान्, कार्यसि।-जनकोऽप्यस्ति।**

विश्वास सर्वशक्तिमान है और कार्य सि। का जनक भी है।

नीति-275

(महानता का रहस्य)

● **विश्वासे विश्वासः, स्वस्मिन् विश्वासश्चेश्वरे विश्वासः श्रेष्ठता-रहस्यम्।**

विश्वास पर विश्वास, स्वयं में विश्वास और ईश्वर में विश्वास; यही महानता का रहस्य है।

नीति-276

(मनुष्य की दुर्गति)

● **विवेकभ्रष्टमानवस्य नूनं दुर्गतिः।**

विवेक-भ्रष्ट मनुष्य की दुर्गति निश्चय ही होती है।

नीति-277

(विवेक पूर्वक मित्रता)

● **स्वविवेकं कुरु स्वमित्रं, सकलविश्वस्तव दासो भविष्यति।**

अपने विवेक को अपना मित्र बना लो, सारी दुनिया तुम्हारी दास बन जायेगी।

नीति-278

(चित्त में संसार नहीं)

● **संसारे वस, किन्तु संसारं स्वचित्ते मा वस।**

संसार में रहो, मगर संसार को अपने अन्दर मत रहने दो।

नीति-279

(पशु कौन?)

● **यस्मिन् विवेक-विनयौ नास्ति, स मानवो भूत्वाऽपि पशुः।**

जिसमें विनय और विवेक नहीं, वह मानव होकर भी तिर्यञ्च ही है।

नीति-280

(सज्जनों का स्वभाव)

● **कदापि सज्जना न कुर्वन्त्यपशब्दप्रयोगः।**

सज्जन कभी भी अपशब्दों का प्रयोग नहीं करते।

नीति-281

(ज्ञानीजनों का पुरुषार्थ)

● **ज्ञानीजना अभीष्टफललाभार्थं पुरुषार्थं कुर्वन्ति, न तु शोकम्।**

ज्ञानीजन अभीष्ट फल की प्राप्ति के लिये पुरुषार्थ करते हैं, शोक नहीं।

नीति-282

(असफलता का कारण)

● **संशयस्तव जीवनेऽसफलतां ददाति।**

संशय आपके जीवन में असफलता देता है।

नीति-283

(संशय से संशयवृद्धि)

● **संशयो विनाशकारणञ्च संशयात् संशयो वर्धते।**

संशय विनाश का कारण है, क्योंकि संशय से संशय बढ़ता है।

नीति-284

(श्रद्धा का अभाव)

● **श्रद्धया अभावे मनोकामनापूर्तिर्न भवति।**

श्रद्धा के अभाव में मनोकामनायें पूर्ण नहीं होती।

नीति-285

(शंका का स्वभाव)

● **शङ्कामेघा विवेकादित्यमाचिन्वन्ति।**

शङ्का के बादल विवेक के सूर्य को ढँक लेते हैं।

नीति-286

(श्रेष्ठ सद्गुण)

● **विश्वासाशादानानि चेति श्रेष्ठसद्गुणाः।**

आशा, विश्वास और दान; ये तीन ही श्रेष्ठ सद्गुण हैं।

नीति-287

(सच्चा दानवीर)

● **सत्यार्थदानवीरः प्रशंसाप्रसिद्धि-वाञ्छां न करोति।**

सच्चा दानवीर प्रशंसा और प्रसिद्धि की अभिलाषा नहीं करता।

नीति-288

(ज्ञान प्राप्ति के लिये आवश्यक)

● **ज्ञानलाभार्थं संयमाभ्यासशान्त्यश्चावश्यकः।**

ज्ञान प्राप्त करने के लिये संयम, शान्ति और अभ्यास आवश्यक हैं।

नीति-289

(शान्ति का प्रभाव)

● **स्वस्मिन् शान्तिलाभे सति सर्वभुवनमपि शान्तं दृश्यते।**

अपने अन्दर शान्ति प्राप्त हो जाने पर सारा संसार भी शान्त दिखाई देता है।

नीति-290

(शान्ति शक्ति का कारण)

● **शान्तिरेव विकासः, शान्तिरेव शक्तेर्मूलाधारश्च।**

शान्ति ही विकास है, शान्ति ही शक्ति का मूलाधार है।

नीति-291

(क्रोध एवं क्षमा का प्रभाव)

● **कोपेनार्धनिष्पन्नकार्याणि नश्यन्ते, क्षमया विकृत - कार्याण्यपि सिद्ध्यन्ति।**

क्रोध से बनते काम बिगड़ते हैं, क्षमा से बिगड़ते काम भी सिद्ध होते हैं।

नीति-292

(शान्ति की कुंजी)

● **प्राप्ते सन्तोषः परेणानीर्ष्या हि शान्तिकुञ्चिका।**

प्राप्त में सन्तोष तथा पर से ईर्ष्या न करना ही शान्ति की कुंजी है।

नीति-293

(आत्मनिर्भरता)

● **सर्वश्रेष्ठकलात्मनिर्भरता।**

आत्मनिर्भर बनना सबसे बड़ी कला है।

नीति-294

(शिक्षा का दान)

● **मा कुरु शिक्षाविक्रयं, कुरु शिक्षाया आदानप्रदानञ्च।**

शिक्षा का विक्रय न करें, शिक्षा का आदान-प्रदान करें।

नीति-295

(शिक्षा जीवन है)

● **शिक्षा तु जीवनार्थं न तु जीविकायै।**

शिक्षा जीवन के लिये है, जीविका के लिये नहीं।

नीति-296

(सफलता का रहस्य)

● **कठोरोद्योगसमर्पणञ्च साफल्यरहस्यम्।**

सफलता का रहस्य सिर्फ कड़ी मेहनत और समर्पण है।

नीति-297

(सफलता के कारण)

● **सफलताप्राप्त्यर्थं सर्वोपरिहेतवः पवित्रताधीरताध्यवसायाः।**

पवित्रता, धैर्य और अध्यवसाय सफलता प्राप्ति के लिये सर्वोपरि हेतु हैं।

नीति-298

(अहंकारी को शिक्षा नहीं)

● **अहङ्कारयुतस्य न ददातु शिक्षां, तस्मात्तु पृथक्त्वं वर्तते।**

अहङ्कारी को शिक्षा नहीं दो, उससे तो दूरी रखी जाती है।

नीति-299

(उद्देश्य की पूर्णता)

● **उद्देश्यं प्रति गहननिष्ठा, साधनमुद्देश्यपूर्णतायाम्।**

उद्देश्य के प्रति गहरी निष्ठा, उद्देश्य की पूर्णता में साधन है।

नीति-300

(समय का दुरुपयोग एवं फल)

● **ये समयस्य दुरुपयोगं कुर्वन्ति, ते खलु समयादाघातं लभन्ते।**

जो समय का दुरुपयोग करते हैं, वे ही समय से चोट पाते हैं।

नीति-301

(क्रोध एवं शान्ति)

● **क्रोधाद्गुरून्मादो नास्ति, शान्तेर्गुरुतपो नास्ति।**

क्रोध से बड़ा कोई पागलपन नहीं, शान्ति से बड़ा कोई तप नहीं।

नीति-302

(व्यक्तित्व विकास में सहायक शिक्षा)

● **शिक्षार्थो व्यक्तित्वविकासो, न तु केवलं पठनम्।**

शिक्षा का अर्थ पढ़ना नहीं है, अपितु व्यक्तित्व का विकास है।

नीति-303

(जीवन की सरलता)

● **तव नम्रता, तव सेवाभावस्तव जीवनस्य सारल्यम्।**

आपकी नम्रता, आपका सेवाभाव, आपके जीवन की सरलता है।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-304

(सफलता के सिद्धान्त)

● **निरन्तरता चात्मविश्वासः साफल्यसिद्धान्ताः।**

सफलता के सिद्धान्त निरन्तरता और आत्मविश्वास है।

नीति-305

(अज्ञानी से शिक्षा)

● **कदाचित्तेभ्यो जीवेभ्यः शिक्षणं लभते, यान् वयमभिमानवशादज्ञानिनो मन्यन्ते।**

कभी-कभी उन लोगों से शिक्षा मिलती है, जिन्हें हम अभिमान वश अज्ञानी मानते हैं।

नीति-306

(शिक्षित मानव श्रेष्ठ है)

● **शिक्षितमानवा अशिक्षितमानवेभ्यस्तावन्तो वरो, यावन्तो जीवितमानवा मृतकेभ्यः।**

शिक्षित मनुष्य अशिक्षित मनुष्यों से उतने ही श्रेष्ठ हैं, जितने जीवित मनुष्य मृतकों से।

नीति-307

(सफल कार्य की निर्भरता)

● **संसारे कस्यचित्कार्यस्योत्तमानुत्तमता सफलतायां निर्भरा।**

संसार में किसी काम का अच्छा या बुरा होना उसकी सफलता पर निर्भर है।

नीति-308

(आत्मविश्वास की संजीवनी)

● **कठिनकार्ये साफल्यमात्मविश्वासार्थं संजीवनी-सदृशम्।**

कठिन कार्यों में सफलता आत्मविश्वास के लिये संजीवनी के समान है।

नीति-309

(समय परिश्रम का दास)

● **यः कठिनश्रमान्न बिभेति, स करोति समयं स्वदासः।**

जो मेहनत करने से नहीं घबराता, वह वक्त को अपना दास बनाता है।

नीति-310

(विजय का उपाय)

● **आपत्तिविपत्तिकाले प्रसन्नतोत्साहौ विजयोपायः।**

आपत्ति-विपत्ति के काल में उत्साह और प्रसन्नता ही विजय का उपाय है।

नीति-311

(स्वभाव अपरिवर्तनीय)

● **उपदेशेन बुध्यते, स्वभावं नैव परिवर्तते।**

उपदेश से समझाया जा सकता है, स्वभाव नहीं बदला जा सकता है।

नीति-312

(उन्नति का प्रयास और कामना)

● **स्वोन्नयनप्रयासं कुरु, परोन्नयनकामनाञ्च कुरु।**

स्वयं की उन्नति का प्रयास करें, दूसरों की उन्नति की कामना करें।

नीति-313

(दुःखों का विस्मरण)

● **आनन्दावसरोपस्थिते सति त्वं स्वकीयदुःखानि विस्मरन्ति।**

आनन्द के अवसर उपस्थित होने पर,
आप अपने दुःखों को भूल जाते हैं।

नीति-314

(लक्ष्मी का वास)

● **आलस्ये दरिद्रताभावोऽस्त्यनालस्ये लक्ष्मीवासः।**

आलस्य में दरिद्रता का भाव है, अनालस्य में लक्ष्मी का वास है।

नीति-315

(सुखी कौन नहीं है ?)

● **यस्य चित्ते आकाङ्क्षा, स न भवति सुखी।**

जिसके चित्त में आकांक्षा है, वह सुखी नहीं रहता है।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-316

(स्वात्म-प्रगति का साधन)

● **स्वात्मप्रगतिसाधनमेकाग्रता।**

स्वात्मप्रगति का साधन एकाग्रता है।

नीति-317

(आचरणहीन कथन में शक्ति नहीं)

● **यं कथनमाचरणे न गृह्णाति, तस्मिन्न भवति शक्तिः।**

जिस कथन को आचरण में न उतारा जाये, उसमें शक्ति नहीं होती।

नीति-318

(सुन्दराचरण)

● **दिव्याचरणं दिव्यदेहाद् वरम्।**

सुन्दर आचरण सुन्दर शरीर से अच्छा है।

नीति-319

(कर्म का दर्पण)

● **कर्मदर्पणे स्वात्मप्रतिबिम्बं दृश्यते।**

कर्म के दर्पण में स्वात्म-प्रतिबिम्ब दिखाई देता है।

नीति-320

(कार्य पूर्ण करने की योग्यता)

● **इच्छाशक्तिनिमित्तेनैव जायते कार्यपूर्णतायोग्यता।**

इच्छा शक्ति के कारण ही, कार्य पूर्ण करने की योग्यता आती है।

नीति-321

(अध्ययन आचरण में हो)

● **अल्पपठनमधिकचिन्तनं चाचरणे तस्मादधिकं भूयात्।**

पढ़ना कम, चिन्तन ज्यादा और आचरण में उससे ज्यादा होना चाहिये।

नीति-322

(सम्मान के कारणभूत गुण)

● **संसारे सम्मानप्रदायका गुणाः।**

संसार में सम्मान दिलाने वाले गुण ही होते हैं।

नीति-323

(प्रार्थना का परिणाम)

● **प्रार्थनापरिणामो हृदयेनात्मनि भवति।**

प्रार्थना का परिणाम हृदय के द्वारा आत्मा पर होता है।

नीति-324

(लक्ष्मी का साम्राज्य)

● **सांसारिकजीवने लक्ष्मीसाम्राज्यं, न तु बुद्धेः।**

सांसारिक जीवन में लक्ष्मी का साम्राज्य है, न कि बुद्धि का।

नीति-325

(परोपकार से लाभ)

● **परोपकारो जीवं संसारात्तारयति।**

परोपकार जीव को संसार से पार लगाता है।

नीति-326

(मनुष्य के स्वाभाविक मित्र)

● **विद्या-शौर्य-दक्षता-बल-धैर्याणि च मनुष्यस्य स्वाभाविकमित्राणि।**

विद्या, शूरवीरता, दक्षता, बल और धैर्य; ये मनुष्य के स्वाभाविक मित्र हैं।

नीति-327

(व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास)

● **जीवस्यव्यक्तित्वव्याख्यानं तस्य भाषाचारित्रे च कुर्वतः।**

व्यक्ति के व्यक्तित्व का बखान उसकी भाषा और चारित्र करते हैं।

नीति-328

(गुणों का आधार विनय)

● **सम्पूर्णसद्गुणा विनयाधीनाः।**

सम्पूर्ण सद्गुण विनय के आधीन हैं।

नीति-329

(गुणों की रक्षा)

● **गुणलाभेन सह तान्नपि रक्षेत्।**

गुणों की प्राप्ति के साथ-साथ उन्हें सुरक्षित भी रखें।

नीति-330

(समय की रक्षा, स्वयं की रक्षा)

● **ये समयं रक्षन्ति, ते धनं स्वं च रक्षन्ति।**

जो समय बचाते हैं, वे धन और स्वयं को बचाते हैं।

नीति-331

(आत्मा के मित्र और शत्रु)

● **पापमात्मरिपुः सद्गुणः स्वात्ममित्रञ्च।**

पाप आत्मा का शत्रु है और सद्गुण आत्मा का मित्र।

नीति-332

(सज्जनों का स्वभाव)

● **सज्जनाः पीडां सहन्ते, न तु ददति।**

सज्जन पीड़ा सहन करते हैं, पीड़ा प्रदान नहीं करते।

नीति-333

(सद्गुणों से धनलाभ)

● **धनात् सद्गुणा न जायन्ते, सद्गुणेभ्यो धनं जायते।**

धन से सद्गुण नहीं होते हैं, सद्गुणों से धन होता है।

नीति-334

(व्यक्ति के सम्मान हेतु गुण)

● **जीवस्यादरःसेवासद्गुण-शीलाभ्याषञ्च भवतः, नैव संपत्त्या।**

व्यक्ति का आदर और सेवा सद्गुण और शील
से ही होती है, न कि संपत्ति से।

नीति-335

(उपदेश का स्वभाव)

● **उपदेशोऽस्ति स्थूलः सूक्ष्ममस्त्याचरणम्।**

उपदेश स्थूल होता है, आचरण सूक्ष्म होता है।

नीति-336

(सदाचार अनुल्लंघनीय)

● **सदाचारोल्लङ्घनं कृत्वा कोऽपि न लभते कल्याणम्।**

सदाचार का उल्लङ्घन करके कोई कल्याण नहीं पा सकता।

नीति-337

(सदाचारी सम्माननीय)

● **परमात्मदृष्ट्या सदाचारी सदा सम्माननीयः।**

परमात्मा की दृष्टि से सदाचारी सदा सम्माननीय है।

नीति-338

(सहयोग की भाषा)

● **सहयोगभाषा प्रत्येकजीवं बोधति।**

सहयोग की भाषा हर प्राणी को समझ में आती है।

नीति-339

(सम्मान के लिये प्रयत्न करें)

● **सम्मानाय प्रयत्नं कुर्यान्न तु कामनाम्।**

सम्मान के लिये कामना नहीं, प्रयत्न करना चाहिये।

नीति-340

(मानवता का गौरव और निशानी)

● **सहानुभूतिर्प्रीतिचिह्नं मानवतागौरवश्च।**

सहानुभूति प्रीति की निशानी है, सहानुभूति मानवता का गौरव है।

नीति-341

(संग्रह करने योग्य क्या है?)

● **धनसम्पदापेक्षया कुर्वात्मसम्मानसंग्रहम्।**

धन-सम्पदा की अपेक्षा आत्मसम्मान का संग्रह करो।

नीति-342

(सम्मान और अपमान किसका?)

● **मा कुरु मूर्ख-सम्मानं, सज्जनापमानञ्च।**

मूर्खों का सम्मान न करें, सज्जनों का अपमान न करें।

नीति-343

(सत्य की शक्ति)

● **सत्यस्फुलिङ्गमसत्यप्रासादं भस्मीकरोति।**

सत्य की चिंगारी असत्य के महल को भस्म कर सकती है।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-344

(जीवन की भूल)

● **असत्य-सम्मानं तव जीवनस्य सर्वोच्चत्रुटिः।**

असत्य का सम्मान आपके जीवन की सबसे बड़ी भूल है।

नीति-345

(असत्यवादी की स्मृति)

● **असत्यवाचकोऽधिकं सत्यवाचकापेक्षया स्मरति।**

सच बोलने वाले की अपेक्षा झूठ बोलने वाला ज्यादा याद रखता है।

नीति-346

(सुख का साधन)

● **योग्यजीवस्य निकटता चायोग्यजीवस्य पृथक्त्वं सुखसाधनम्।**

योग्य व्यक्ति की निकटता और अयोग्य व्यक्ति की दूरी; सुख का साधन है।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-347

(स्वावलम्बन और परावलम्बन)

● **स्वावलम्बनमुन्नयनसाधनं, परावलम्बनं दुःख-संक्लेशत्वसाधनञ्च।**

स्वावलम्बन-गुण उन्नति का साधन है, परावलम्बन दुःख और संक्लेशता का साधन है।

नीति-348

(सत्य की वास्तविकता)

● **सत्यं ग्रहणकाले कटुकमनुभवति, किन्तु ग्रहणस्य पश्चाज्जीवनं माधुर्यं ददाति।**

सत्य स्वीकारते वक्त कड़वा लगता है, मगर स्वीकारने के पश्चात् जीवन को मधुरता देता है।

नीति-349

(पुण्य का मूल)

● **सर्वपुण्यसद्गुणसद्गतिमूलं सत्यभाषणाचरणञ्च।**

सारे पुण्य, सद्गुणों और सद्गति की जड़ सत्य भाषण और सत्य आचरण है।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-350

(स्वाभिमानी का स्वभाव)

● **स्वाभिमानी म्रियते, किन्तु कदापि दीनत्वं न प्रकाशयति।**

स्वाभिमानी मनुष्य मर सकता है, पर कभी भी दीनता प्रकट नहीं करता।

नीति-351

(धर्म का साधन देह)

● **धर्मस्य सर्वप्रथमसाधनं देहशुचितास्वास्थ्यञ्च।**

धर्म का सर्वप्रथम साधन देह की शुचिता और स्वस्थता है।

नीति-352

(किससे ईर्ष्या न करें)

● **परेभ्यस्सम्मानं लब्ध्वाभिमानं न कुरु,**
सम्मानीयपुरुषं दृष्ट्वेर्ष्यां न कुरु।

दूसरों से सम्मान प्राप्त करके अभिमान न करें,
सम्मानीय पुरुष को देखकर ईर्ष्या न करें।

नीति-353

(सत्य परमब्रह्म)

● **सत्यादृगुरुर्कोऽपि धर्मो नास्ति, सत्यं स्वस्मिन् परमब्रह्मा।**

सत्य से बड़ा कोई धर्म नहीं, सत्य स्वयं में परमब्रह्म है।

सत्यार्थ-नीतिः

नीति-354

(शिक्षा अनुभव और विवेक से)

● **साधारणजनाअनुभवेनशिक्षन्ते,ज्ञानीजनाविवेकेनशिक्षन्ते।**

साधारण जन अनुभव से सीखते हैं, ज्ञानीजन विवेक से सीखते हैं।

नीति-355

(स्वभाव की उन्नति शिक्षा से)

● **स्वभाव एक उपार्जितगुणोऽस्ति, तस्मिन् शिक्षासत्सङ्गाभ्यामुन्नयनं भवति।**

स्वभाव एक उपार्जित गुण है, उसमें शिक्षा और सत्सङ्ग से सुधार हो सकता है।

नीति-356

(सम्मान नाश, जीवन का नाश)

● **सम्मान-विनाशे सति जीवनविनाशो भवति।**

सम्मान नष्ट होते ही जीवन नष्ट हो जाता है।

नीति-357

(क्रोध की प्रतिक्रिया)

● **पुण्यभावरक्षणार्थं कोपकाले विलम्बेन प्रतिक्रियां देहि।**

पुण्य और भाव की सुरक्षा के लिये क्रोध के काल में प्रतिक्रिया विलम्ब से दें।

नीति-358

(विपत्ति-काल में प्रशंसनीय)

● **यो विपत्तिकालेऽपि स्वस्वभावे निवसति स पवित्रोऽस्ति, कुलीनोऽस्ति, प्रशंसनीयोऽस्ति।**

जो विपत्ति में भी अपने स्वभाव में रहता है, वही पवित्र है, कुलीन है, प्रशंसनीय है।

नीति-359

(जीवन में चारित्र निर्माण आवश्यक)

● **चारित्रनिर्माणं विना कोऽपि गुरुकार्यं न कुर्यात्।**

चारित्र निर्माण के बिना कोई भी बड़ा काम नहीं करना चाहिये।

नीति-360

(भविष्य की सुरक्षा)

● **भविष्यमुत्तमकरणार्थमनुत्तमनिमित्तेभ्योऽपगच्छ।**

भविष्य को अच्छा करने के लिये बुरे निमित्तों से दूर हटो।

नीति-361

(स्वार्थी प्रेम)

● **येन स्वार्थपूर्तिर्तेन सर्वे प्रेम कुर्वन्ति।**

जिससे स्वार्थपूर्ति हो, उससे सभी प्रेम करते हैं।

नीति-362

(सहनशीलता ही साहस है)

● **सहनशीलत्वं साहसं, न तु प्रतिकारः।**

बदला लेना साहस नहीं है, सहन करना साहस है।

नीति-363

(स्वार्थी निर्लज्ज है)

● **निर्लज्जो भवति स्वार्थी।**

लज्जा रहित व्यक्ति स्वार्थी होता है।

नीति-364

(साहित्य क्या है?)

● **यत्सकलहितचिन्तकं तदेव साहित्यम्।**

जो सभी का हितचिन्तक हो, वही साहित्य है।

नीति-365

(महापुरुषों की रुचि)

● **साहित्य-सङ्गीत-कलासु च महापुरुषा रुचिं धरन्ति।**

महापुरुष ही साहित्य, सङ्गीत और कला में रुचि रखते हैं।

नीति-366

(सावधान व्यक्ति के लक्षण)

● **सावधाना अल्पभाषणं कुर्वन्त्यल्पं विस्मरन्त्यधिकञ्च शृण्वन्ति।**

सावधान व्यक्ति कम बोलते हैं, कम भूलते हैं और ज्यादा सुनते हैं।

नीति-367

(क्रोध से सावधान रहो)

● **यथाग्निविषभ्यामवदधासि, तथैव क्रोधादिविषरूप-भावेभ्योऽवधेहि।**

जैसे विष और अग्नि से सावधान रहते हो,
वैसे ही क्रोधादि विषरूप भावों से सावधान रहो।

नीति-368

(जागरुकता आवश्यक)

● **य एकवारं वञ्चयति, स पुनरपि वञ्चयति; जागृहि।**

जो एक बार धोखा दे सकता है, वो दुबारा भी धोखा दे सकता है, जागरुक रहें।

नीति-369

(सावधानी साधना है)

● **असावधानी विनाशसाधनं, सावधानी किल साधना।**

असावधानी विनाश का साधन है, सावधानी ही साधना है।

नीति-370

(तीर्थभूत क्या ?)

● **तीर्थस्थानवन्दना किल तव तीर्थभूतः कारयति।**

तीर्थस्थान की वन्दना ही आपको तीर्थभूत बनाती है।

नीति-371

(चित्त के वशीकरण का साधन)

● **चित्तवशीकरणार्थमध्यात्मविद्या हि प्रमुखसाधनम्।**

चित्त को वश में करने के लिये अध्यात्मविद्या ही प्रमुख साधन है।

नीति-372

(शोक निमग्नता का कारण)

● **मूर्खसङ्गत्या मानवश्चिरकालं शोकनिमग्नो भवति।**

मूर्खों की सङ्गति के कारण मनुष्य चिरकाल तक शोक निमग्न रहता है।

नीति-373

(मुर्खों की संगति से हानि)

● **मूर्खसङ्गतिश्शत्रूभ्योऽधिका दुःखप्रदा।**

मूर्खों की सङ्गति शत्रुओं से ज्यादा दुःखप्रद है।

नीति-374

(साधन संग्रह वर्जनीय)

● **साधनायै साधनात्माराधनाञ्च कुरु, साधनसंग्रहं न कुरु।**

साधना के लिये साधना और आत्माराधना करें, साधन संग्रह न करें।

नीति-375

(संगति व्यवहार की परिचायिका)

● **तव सङ्गतिस्तव व्यवहारपरिचायका, तां परिशुध्य।**

आपकी सङ्गति आपके व्यवहार की परिचायक है, उसे सुधारें।

नीति-376

(धनी कौन?)

● **यो दरिद्रो भूत्वाऽपि संतुष्टः, स धनवान्।**

जो दरिद्र होकर भी संतुष्ट है, वही धनी है।

नीति-377

(साधना क्या है?)

● **मनो मुखं चेकाकीकरणं साधना।**

मन और मुख को एक करना साधना है।

नीति-378

(संयमी जीवन की आवश्यकता)

● **सुखेच्छुकं संयममयं जीवनं जीवेत्।**

सुख के इच्छुक को संयम का जीवन व्यतीत करना चाहिये।

नीति-379

(सन्तोष में आनन्द)

● **लोभाद् दुःखं जायते, सन्तोषे आनन्दो हि आनन्दः।**

लोभ से दुःख उत्पन्न होता है, सन्तोष में आनन्द ही आनन्द है।

नीति-380

(सन्तोष स्वाभाविक सम्पत्ति)

● **सन्तोषः स्वाभाविकसम्पत्तिर्विकासः कृत्रिमनिर्धनता।**

सन्तोष स्वाभाविक सम्पत्ति है, विकास कृत्रिम निर्धनता है।

नीति-381

(आत्मा के लिये स्वाध्याय आवश्यक)

● **देहार्थं व्यायामः स्वात्मार्थं स्वाध्याय आवश्यकः।**

शरीर के लिये व्यायाम और आत्मा के लिये स्वाध्याय आवश्यक है।

नीति-382

(जीवनोन्नति का साधन)

● **मनोवचनकायसंयमो जीवनोन्नयनस्य सर्वश्रेष्ठसाधनम्।**

मन, वचन और काय का संयम, जीवन की उन्नति का सर्वश्रेष्ठ साधन है।

नीति-383

(महापाप क्या है?)

● **स्वसुखार्थं परकष्टदानं महापापम्।**

अपने सुख के लिये दूसरों को कष्ट देना महापाप है।

नीति-384

(जीवन का सुख)

● **परसुखदाने जीवनसुखं, न तु ताल्लुण्ठने।**

जीवन का सुख दूसरों को सुखी करने में है, उनको लूटने में नहीं।

नीति-385

(आत्मविकास का साधन ज्ञान का संचय)

● **आत्मविकासस्य सर्वोच्चसाधनं सत्यार्थज्ञानसंचयः।**

आत्मविकास का सर्वोच्च साधन सच्चे ज्ञान का संचय है।

नीति-386

(दुःख से मुक्ति का साधन)

● **दुःखमुक्तिसाधनं तपस्या।**

दुःखों से मुक्ति का साधन तपस्या है।

नीति-387

(पुण्यसंग्रह से सभी कुछ संभव)

● **पुण्यसंग्रहात् सकलपदार्थलब्धिर्सम्भवः।**

पुण्यसंग्रह से ही सकल पदार्थों की प्राप्ति सम्भव है।

नीति-388

(सुख का साधन शान्ति)

● **शान्तेर्विशालं सुखसाधनं नास्ति।**

शान्ति से बड़ा सुख का साधन नहीं है।

नीति-389

(भविष्य का सुख साधन क्या है?)

● **सेवापरोपकारौ भाविसुखसाधनम्।**

सेवा और परोपकार भविष्य के लिये सुख का साधन हैं।

नीति-390

(सेवा का प्रभाव)

● **सेवया शत्रुरपि मित्रं भवति।**

सेवा करने से शत्रु भी मित्र हो जाता है।

नीति-391

(सौन्दर्य क्या है ?)

● **क्षमा तपस्विसौन्दर्यं, विद्या विज्ञसौन्दर्यञ्च।**

तपस्वियों का सौन्दर्य क्षमा है, विज्ञजनों का सौन्दर्य विद्या है।

नीति-392

(सच्चा सौन्दर्य)

● **हृदयपवित्रता वाणीसौम्यता च सौन्दर्यम्।**

हृदय की पवित्रता और वाणी की सौम्यता, सच्चा सौन्दर्य है।

नीति-393

(चिन्ता ही शत्रु है)

● **चिन्ता तव चित्तस्थस्तव शत्रुः।**

चिन्ता आपके अन्दर बैठा आपका शत्रु है।

नीति-394

(हृदय में धारण करने योग्य गुण)

● **दयाक्षमाविनयान् हृदये धेहि।**

दया, क्षमा और विनय, इन तीनों को हृदय में धारण करो।

नीति-395

(कठिनतम कार्य क्या है ?)

● **दुर्वचनेषु क्रोधानुत्पत्तिर्कठिनतमं कार्यम्।**

दुर्वचनों पर क्रोध न उत्पन्न होना, कठिनतम कार्य है।

नीति-396

(मानववृत्ति एवं पशुवृत्ति)

● **दोषभवनं मानववृत्तिर्दोषपुनरावृत्तिर्पशुवृत्तिः।**

गलती हो जाना मानव वृत्ति है, गलती दोहराना पशुवृत्ति है।

नीति-397

(बाह्य और अन्तरंग ज्ञानसंग्रह में अन्तर)

● **बहिर्ज्ञानसंग्रहे आभ्यन्तरज्ञानसंग्रहे च विपुल-वैषम्यम्।**

बाहर के ज्ञान के संग्रह में और अन्दर के ज्ञान के संग्रह में महान् अन्तर है।

नीति-398

(सज्जनों की गुणवृद्धि का साधन)

● **परदोषेभ्यः शिक्षणं, सज्जनानां गुणवृद्धिसाधनम्।**

दूसरों की गलतियों से सीखना, सज्जनों की गुणवृद्धि का साधन है।

नीति-399

(ज्ञान की प्रथम सीढ़ी)

● **स्वाज्ञानताभासो ज्ञानस्य प्रथमसोपानम्।**

अपनी अज्ञानता का आभास ज्ञान का प्रथम सोपान है।

नीति-400

(ज्ञानलब्धि क्या है ?)

● **विनम्रता-जिज्ञासा-सेवाभ्यो ज्ञानलब्धिः।**

विनम्रता, जिज्ञासा और सेवा से ज्ञान लब्धि होती है।

। इत्यलम्।

प्रशस्तिः

अनादिनिधनं कर्मसिद्धान्तं कथितौ सनातनदिगम्बरजैनश्रमण-संस्कृतौ प्रथमतीर्थेश-आदिशङ्करो भगवान् ऋषभदेवोऽस्मिन् काले सर्वप्रथमः सत्यार्थो मार्गदर्शकोऽर्हन्तो भूतः। तीर्थङ्करेष्वादित्यवत्-प्रकाशमानो यशस्वी अन्तिमतीर्थेशोऽस्माकं विश्वस्य कुलदेवता, अहिंसानीतेर्बोधको भगवान् महावीरजिनो जातः। वर्तमानशासननायकस्य वर्धमानस्य मोक्षगमनोपरान्तस्यानेकाः केवलिनः, श्रुतकेवलिनः, श्रुतज्ञाः जाताः। पुनः पञ्चमकाले स्वपरविशुद्धिरक्षकः प्राकृतभाषाया आद्यकविर्दिगम्बराचार्यः कुन्दकुन्दस्वामी भूतः।

अस्यां जिनशासनरक्षक-प्रभावक-संवर्धक-श्रमण-परम्परायां घोरतपस्वी-श्रमणेषु प्रधानो विश्वप्रसिद्धः प्रथमः श्रमणाचार्यः

प्रशस्ति

अनादिनिधन कर्मसिद्धान्त को बतानेवाली सनातन दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति में प्रथमतीर्थेश आदिशंकर भगवान् वृषभदेव इस काल में सर्वप्रथम सत्यार्थ मार्गदर्शक अरहंत हुये। तीर्थंकरों में आदित्यवत् प्रकाशमान यशस्वी अंतिम-तीर्थेश हम सबके विश्व के कुलदेवता, अहिंसा और नीति का बोध करानेवाले भगवान् महावीर स्वामी हुये। वर्तमान के शासननायक वर्धमानस्वामी के मोक्षगमन के उपरान्त अनेकों केवली, श्रुतकेवली और श्रुतज्ञ भगवंत भी हुये। पुनः पंचमकाल में स्वपर-विशुद्धि के रक्षक, प्राकृत भाषा के आद्यकवि दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्दस्वामी का उद्भव हुआ।

इसी जिनशासन-रक्षक, प्रभावक, संवर्धक श्रमण परम्परा में घोर तपस्या करने वाले श्रमणों में प्रधान, विश्व-प्रसिद्ध प्रथम श्रमणाचार्य,

पूतपरम्परायां वनवासी- मुनिकुञ्जर-आदिसागरोऽङ्कलीकरो जातः। तस्य प्रथमशिष्यः पट्टाचार्यो यन्त्रतन्त्रगूढवेत्ता ज्ञानशिरोमणि अष्टादशभाषाविज्ञः शुद्धविशुद्धाचारक उपसर्ग-परीषहविजेता सर्वजनहितकारक आचार्यो भगवान् महावीरकीर्तिर्जातः। यस्य कीर्तिरद्यापि विश्वे सुवासितः।

तस्य प्रथमशिष्यो निमित्तज्ञानशिरोमणिर्वात्सल्य-रत्नाकरः, सर्वजनोद्धारको मंत्रस्य गूढज्ञाता प्रयोक्ताश्च वाणीसिद्धो विमलमन आचार्यः श्रीविमलसागरः श्रमणराजो भूतः। तस्य शिष्य उपसर्गविजेता सिद्धान्तचक्रवर्ती चारित्रशिरोमणिर्रत्नत्रयवर्धिनी इत्यादय अनेकानां संस्कृतटीकाग्रन्थानां कर्ता विशालचतुर्विधसंघनायक आत्मानु-शासितोऽनुशासनप्रियो गुरुगणीपदप्रदाता ममोपरि सदैव वरदहस्त-दायको विरागमनो गणाचार्यः श्रीविरागसागरः श्रमणेशो जातः।

तस्य प्रियाग्रप्रथमशिष्यः चर्याशिरोमणिः शताब्दीदेशनाचार्यः संस्कृतिशासनाचार्यः स्वाध्यायसंवर्धकः सूत्रार्थविशारदः सिद्धान्ता-

---

पूतपरम्परा में वनवासी, मुनिकुंजर श्री आदिसागर जी अंकलीकर हुये। उनके ही प्रथम शिष्य, पट्टाचार्य यन्त्रमन्त्रतन्त्र के गूढ़ज्ञाता, ज्ञानशिरोमणि, अट्ठारहभाषाविद्, शुद्धविशुद्धाचारक, उपसर्गपरीषहजेता, सर्वजनहितकारक आचार्य भगवन् महावीरकीर्ति जी हुये। जिनकी कीर्ति आज भी विश्व में सुवासित है।

उनके प्रथम शिष्य निमित्तज्ञान-शिरोमणि, वात्सल्य-रत्नाकर, सर्वजनोद्धारक, मन्त्रों के गूढ़ज्ञाता और प्रयोक्ता, वाणीसिद्ध, विमलमनः आचार्य श्री विमलसागर जी श्रमणराज हुये। उनके शिष्य उपसर्ग विजेता, सिद्धान्त-चक्रवर्ती, चारित्र-शिरोमणि, रत्नत्रयवर्धिनी आदि अनेकों संस्कृत-टीका ग्रंथों के कर्ता, विशालचतुर्विध संघनायक, आत्मानुशासित, अनुशासनप्रिय, गुरुगणीपद प्रदाता, मुझ पर सदा अपना वरदहस्त रखने वाले विरागमनः गणाचार्य श्री विरागसागर जी श्रमणेश हुये।

उनके प्रियाग्र प्रथम शिष्य, चर्याशिरोमणि, शताब्दी-देशनाचार्य, संस्कृति-शासनाचार्य, स्वाध्याय-संवर्धक, सूत्रार्थ-विशारद, सिद्धान्त-

सत्यार्थ-नीतिः

ध्यात्मनयन्यायादि-विद्याप्रवीणः सत्यार्थबोधादयो द्विशताधिकग्रन्थानां सृजनकर्ता विशालनिर्ग्रन्थश्रमणसंघनायको द्विशताधिकपञ्च-कल्याणककारको विशुद्धमनो, मम दीक्षाशिक्षागुरुः श्रमणाचार्यो भगवान् श्रीविशुद्धसागरो जातः।

तस्य प्रीतिपात्रो विद्याव्यसनी श्रुतसंवेगी अल्पाहारी बहुपरिश्रमी आदिविद्यास्तुतिरात्मकीर्तनादि-संस्कृत-प्राकृत-अपभ्रंश-हिन्द्यादयः अर्धाधिकद्विशतग्रन्थानां कर्ता सिद्धहस्तो विश्वविख्यातः श्रुतपुत्रो महाश्रमणादित्यसागरोऽस्य सत्यार्थनीति इति नाम्नः ग्रन्थस्य रचनाकारो विद्यते।

राजस्थानराज्यस्य कोटानगरस्य ऋद्धिसिद्धि-नगरे भगवान् चन्द्रनाथस्वामिनः पावनचरणयोर्ग्रन्थास्य मंगलाचरणं शुभारम्भञ्च वीरनिर्वाण संवत् 2550 तमे वर्षे आषाढ़मासस्य शुक्लपक्षस्य पूर्णिमातिथौ अभवत् तथा च तस्मिन् स्थाने वर्षे च श्रावणमासे अमावस्यातिथौ अयं ग्रन्थः सम्पूर्णो जातः।

अध्यात्म-नयन्यायादि-विद्याप्रवीण, सत्यार्थ-बोधादि 200 से अधिक ग्रन्थों के सृजेता, विशाल-निर्ग्रन्थ श्रमण संघनायक, 200 से अधिक पंचकल्याणक प्रतिष्ठाकर्ता, विशुद्धमनः मम दीक्षा-शिक्षा गुरु श्रमणाचार्य भगवन् श्री विशुद्धसागर जी हुये।

उनके ही प्रीतिपात्र, विद्याव्यसनी, श्रुतसंवेगी, अल्पाहारी, बहुपरिश्रमी, आदिविद्या-स्तुति-आत्मकीर्तनादि 250 संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी आदि ग्रंथों के कर्ता, सिद्धहस्त, विश्वविख्यात, श्रुतपुत्र महाश्रमण आदित्यसागरजी ने इस ''सत्यार्थ-नीति'' ग्रन्थ की रचना की है।

राजस्थान राज्य के कोटा नगर के ऋद्धि सिद्धि नगर में भगवान् चन्द्रनाथ स्वामी के पावन चरणों में इस ग्रन्थ का मंगलाचरण एवं शुभारम्भ वीरनिर्माण संवत् 2550 में आषाढ़मास की शुक्लपक्ष की पूर्णिमा तिथि में हुआ तथा उसी स्थान पर वीर निर्माण संवत् 2550 की श्रावण मास की अमावस्या तिथि में यह ग्रन्थ समाप्त हुआ।

सत्यार्थ-नीतिः

चतुराधिकशत-सूत्रप्रमाणमयः सत्यार्थनीतिग्रन्थो बुद्धिवर्धकार्थ-बोधक-पुण्यवर्धकप्रीतिवर्धकादि-नीत्या ओतप्रोतो वर्तते। ग्रन्थेऽस्मिन् शताधिकनीतिविषयाणामुपलब्ध्यः सन्ति। ग्रन्थोऽयं पठनीयो, रक्षणीयश्चिन्तनीयश्च विद्यते।

।। नमो नमः सिद्धसाधूभ्यः ।।

---

400 सूत्र प्रमाण यह सत्यार्थनीति ग्रन्थ बुद्धिवर्धक, अर्थवर्धक, पुण्यवर्धक, प्रीतिवर्धकादि नीति से ओतप्रोत है। इस ग्रन्थ में शताधिक नीति विषयों की उपलब्धियाँ हैं। यह ग्रन्थ पठनीय, रक्षणीय एवं चिन्तनीय है।

।। नमो नमः सिद्ध-साधूभ्यः ।।